शाहीभूत

—❀०❀—

(एक क़ौमी गद्दार व देश के नमक हराम का शिक्षाप्रद
रोमांचकारी ऐतिहासिक वृतांत)
उपन्यास के ढङ्ग पर

—❀०❀—

लेखक—
दातादयाल महर्षि शिवव्रतलाल बर्मन एम० ए०

—❀०❀—

सम्पादक—
नन्दूभाई
(निज़ामाबाद दक्षिण)

—❀०❀—

स० सम्पादक—
देबीचरन मीतल
लेखराज नगर (अलीगढ़)

प्रथमबार | सर्वाधिकार सुरक्षित | एक प्रति का मूल्य १)

विषय–अनुक्रमणिका

परिच्छेद	विषय	पृष्ठ
प्रथम परिच्छेद–	अग्नि कुल वंश	५
दूसरा परिच्छेद–	भ्रष्ट जीवन की अन्तिम श्रेणी	८
तीसरा परिच्छेद–	भ्रष्ट जीवन का पालन पोषण	१६
चौथा परिच्छेद–	भ्रष्ट जीवन का कारोवार	२०
पांचवां परिच्छेद–	भ्रष्ट जीवन के नीच सम्बन्ध	२६
छटा परिच्छेद–	भ्रष्ट जीवन का भ्रष्टता पूर्ण पत्र व्यवहार	२६
सातवां परिच्छेद–	भ्रष्ट जीवन के भ्रष्टाचार पूर्ण पत्र व्यवहार का फल	३२
आठवां परिच्छेद–	भ्रष्टता पूर्ण सम्मति	३६
नवाँ परिच्छेद–	भ्रष्ट सम्मति के अनुसार व्यवहार	४२
दसवाँ परिच्छेद–	भ्रष्ट आचरण का भ्रष्ट परिणाम	४५
ग्यारहवाँ परिच्छेद–	दहलाने वाला दृश्य	४७
बारहवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टता का पारितोषिक	५०
तेरहवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टाचार के दन्ड का प्रारम्भ	५४
चौदहवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टाचार के दन्ड की दूसरी रात	५६
पन्द्रहवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टता के दन्डों की तीसरी रात	६१
सोलहवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टता के दण्डों की व्याख्या	६५
सत्तरहवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टता के दण्डों की चौथी रात	७०
अठारहवां परिच्छेद–	भ्रष्ट दृश्यों की विशेष व्याख्या	७२
उन्नीसवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टता के दण्ड की पाँचवी रात	७६
बीसवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टता के और बदले	८४
इक्कीसवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टता की और अधिक व्याख्या	८७
बाईसवाँ परिच्छेद–	भ्रष्टता की स्वीकृति [इक़रार] का लेख	९०
तेईसवां परिच्छेद–	भ्रष्ट जीवन का भ्रष्ट परिणाम	९२
लेखक का नोट–		९८
वन्दना–		९९

R.S.

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवमहेश्वरः।
गुरु साक्षात् परब्रह्मः तस्मै श्री गुरुवेनमः॥

शिव

वर्ष २ | जुलाई व अगस्त १९५६ ई० | तरंग ५ व ६

चेतावनी

नहिं कोई तेरा एगाना है नहिं कोई।

१–आवत साथ न कोई आवे, जात समय कोई संग न जावे।
तू क्यों इनसे नेह लगावे, क्या सचमुच दीवाना है॥ नहिं कोई

२–चार दिना का यह जग मेला, करता है क्यों ठेलम् ठेला।
आया अकेले जाय अकेला, यह तो देश विराना है॥ नहिं कोई

३–हाथी घोड़े माल खज़ाना, खेत मुल्क जंगल मैदाना।
इनका नहिं है ठौर ठिकाना, इनमें क्यों भरमाना है॥ नहिं कोई

४–राम गये रघुकुल के पालक, रावन गया निशाचर घालक।
रहे वशिष्ट न ऋषि उद्दालक, झूठा सब मद माना है॥ नहिं कोई

५–सतगुरु सन्त की महिमा भारी, वह तेरे सांचे हितकारी।
राधास्वामी चरण शरण बलिहारी, शरण में आ जो सयाना है॥

—❀❀—

आवश्यक निवेदन !

'शिव का वार्षिक चन्दा ६) रु० जिन भाइय ने अभी तक मैंनेजर 'शिव' पोस्ट दयाल नगर अलीगढ़ के पास नहीं भेजा है उनसे सविनय प्रार्थना की जाती है कि वह अपना २ चन्दा मनीआर्डर द्वारा जल्द भेज दें ताकि 'शिव' के प्रकाशन में सहूलियत रहे।

शिव जी महाराज की रोज़ाना भेंट का लगभग एक पैसा है। यदि एक पैसा रोज़ाना निकाल कर अलग रख दिया जाय तो शिव जी महाराज की सालाना भेंट आसानी के साथ पूरी हो सकती है। ग़रीब से ग़रीब आदमी भी एक पैसा रोज़ाना आसानी के साथ दे सकता है। इस तुच्छ रक़म के बदले शिव जी महाराज महीने में एक बार आप को घर बैठे सत्संग कराने आ जाते हैं और एक ऐसी अमूल्य पुस्तक दे जाते हैं जिसके अवलोकन से गूढ़ रहस्य और सार तत्व का भेद सुगमता के साथ आपके हृदयाङ्कित हो जाता है। यदि इस पर सावधानी के साथ नियम पूर्वक चला जाय तो जीवन शांतिप्रद और सुखप्रद बन जाता है।

यह 'शिव' मासिक पत्र आप भाइयों के हित के लिए जारी किया गया है किसी के पेट पालने के लिये नहीं किया गया। इस तुच्छ भेंट ६) सालाना के बदले आपको प्रतिमास सुन्दर २ पुस्तकें भेंट की जाती हैं और ज्ञान ध्यान, भक्ति भाव और सन्त मत के गूढ़ रहस्यों को साधारण बोल चाल में प्रगट किया जाता है। इसलिए इसको अपनाना और लोगों तक पहुंचाना उपकार का कार्य है। जिनको हक़ीक़त या सत वस्तु के जानने की प्यास है वह इससे अवश्य लाभान्वित होंगे। यदि हो सके तो 'शिव' के दो दो ग्राहक बनाकर इन शुभ विचारों के फैलाने में सहायक बनिये और हाथ बटाइये भला होगा। गुरु आपका कल्याण करें।

शुभचिंतक—नन्दू भाई (सम्पादक)

रियायत !

'शिव' के ग्राहकों को हमारे यहाँ की प्रकाशित पुस्तकें पौन मूल्य में मिलेंगी। थोड़ी सी प्रतियां शेष हैं। अतः मँगाने की जल्दी करें। डाक खर्च अलग होगा।

राधास्वामी जोग

'शिव' में सितम्बर ५६ ई० से कई अङ्कों में क़रीब ६२५ पृष्ठों में प्रकाशित होगा। इसमें सब प्रकार के योगों की पूर्ण व्याख्या व तुलना की गई है और साधन विधियों का भी वर्णन किया गया है, बड़ी अमूल्य पुस्तक है। केवल थोड़ी सी प्रतियाँ छपवाई जारही हैं। अतः प्रेमी सज्जन तुरन्त 'शिव' के ग्राहक बन जांय अथवा अपना अलग आर्डर भेज दें, वर्ना बाद में मिलना कठिन होगा।

—मैनेजर

❀ भूमिका ❀

इस कहानी में जो घटनायें लिखी गईं हैं वे बिल्कुल ही कल्पित नहीं हैं बल्कि ऐतिहासिक हैसियत रखती हैं। जिस क़ौमी ग़द्दार और देश के कृतघ्नी ने अकबर को चित्तौड़ पर चढ़ाई करने को उकसाया और जिसके कारण यह तीसरा 'जौहर' साकार हुआ और अमूल्य जीवन नष्ट हुये, उसका नाम तक किसी को नहीं मालूम है। राजपूती शान सहन नहीं करती कि ऐसे जाति के पतन करने वाले के नाम से उसके वीरता के कृत्यों (कारनामों) को अपवित्र किया जाय। जान बूझकर उसके नाम को भुलाने का प्रयत्न किया गया है ताकि नवयुवकों के कान ऐसे अपवित्र नाम से सर्वदा अनभिज्ञ रहें।

यह कौन था, किस राजपूत वंश से था, और उसने किस प्रकार अपने राजधर्म का पालन किया है, किसी को ज्ञात नहीं है और न किसी चारण या कवि ने ही उसकी ओर ध्यान दिया है। हाँ, कभी २ संकेत मात्र उसका कुछ वर्णन राजस्थान के क़िस्से यद्यपि कर दिया करते हैं, उसी के आधार पर हम अपनी कहानी इसकी बोली में आरम्भ करते हैं मगर हमको भी राजपूती भावनाओं का इतना लिहाज है कि हम भी जान बूझकर उसका नाम न बतायेंगे और न ऐसे कुकर्मी का कोई कल्पित नाम रक्खेंगे। इस नाम के भुलाने के दो कारण हैं। प्रथम यह कि जहां तक इस प्रकार के ग़द्दारों की कृतघ्नता से अनभिज्ञता रहे, वहां तक अच्छा ही है। दूसरे इस बर्ताव से इनकी दो प्रकार की मृत्यु होती है। क़ब्र के मुर्दे उखेड़ना अनुचित कर्म होगा। लेकिन यदि इस उपाय से किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त की जा सकती है तो वह क्षमा योग्य समझा जा सकता है। यह कारण है कि हम बिना अधिक सोच विचार किये इस संक्षिप्त कहानी को वर्णन करते हैं। इसके अतिरिक्त और कोई उद्देश्य नहीं है। हम आशा करते हैं कि यह नई कहानी रोचक और शिक्षाप्रद सिद्ध होगी।

भूल सुधार

[शिव के अङ्क नं० ३ (हितोपदेश) में]

प्रेस की असावधानी से इस अंक में निम्नलिखित ग़ल्तियां हो गईं हैं अतः पाठकों से प्रार्थना है कि वे अपनी पुस्तक में उन्हें ठीक कर लें ताकि किसी को भ्रम न हो। पृष्ठ ५६ पर जो शब्द दिया है उसकी तीसरी कड़ी की दूसरी लायन में 'तुम हुए कृतघ्न समझा तक न वारापार को।' छपा है मगर होना चाहिए 'भरम में फँसकर न समझा, तुमने वारापार को ॥' पृष्ठ ६७ की छटी लाइन में "राधास्वामी का चेला" छपा है ग़लत है। उसके बजाय "रामानन्द का चेला" होना चाहिए। —सम्पादक

शब्द गुन्जार (उर्दू)

इस पुस्तक में हुजूर दातादयाल के अत्यन्त रसीले मनोहर और श्रेष्ठ शब्दों का संग्रह है। रोजाना पाठ के लिए एक बड़ी उत्तम पुस्तक है। रियासत हैदराबाद में तो हर जगह के सतसंग में इसका पाठ होता है। उत्तर प्रदेश, दहली, प्रान्त पंजाब आदि में भी अनेक स्थानों पर इसका पाठ होता है। सत्संगी भाई शौक़ से मंगा सकते हैं। केवल थोड़ी कापियाँ रह गईं हैं। मँगाने वाले जल्दी करें। एक कापी का मूल्य १।) रु० डा० ख० अलग।

मिलने का पता:—
मैनेजर 'दयाल' केशवगिरी,
हैदराबाद (दक्षिण)

शब्द सार (हिन्दी)

इस पुस्तक में महर्षि जी महाराज के अत्यन्त मनोहर और रसीले ११० शब्दों का संग्रह प्रकाशित किया गया है। यह नित्य प्रति पाठ के लिए बड़ी श्रेष्ठ और अच्छी पुस्तक है। थोड़ी सी प्रतियाँ रह गई हैं। मँगाने की जल्दी करें। मूल्य ।॥)

शिव सा० प्र० मंडल पो० दयालनगर (अलीगढ़)

प्रार्थना

❋ चौपाई ❋

मैं सेवक सतगुरु राधास्वामी । बार बार उन चरण नमामी
मैं पापी राधास्वामी पुनीता । मैं माया बस स्वामी अतीता ॥
चरण शरण की ओर गई जब । दुख दरिद्र सब लोप भये तब
मैं किरण राधास्वामी भानु सम । राधास्वामी से पाऊँ
शम दम ॥
शम दम पाय जो करूँ पयाना । सूझे सहजहि पद निरवाना ॥
राधास्वामी सतगुरु कमल सुजान । मैं भौंरा अचेत अज्ञान ॥
दोहा–मैं तो कीट अकार हूं, राधास्वामी भृंगी जान ।
राधास्वामी की दया, पाऊँ भक्ती दान
नहिं विवेक नहिं मन चतुराई । नहिं विद्या नहिं बल प्रभुताई ॥
धन सम्पति तजि गुरु को सुमिरूँ । गुरु की कृपा सिंधु
भव उतरूँ ॥
सिद्धि शक्ति गुरु नाम रहाई । ले यह समझ करूँ सेवकाई ॥
नाम न विसरूँ विसरूँ तन मन । एक रूप लख घर पर्वत बन ॥
पल २ नाम रटूँ अविनाशी । काटूँ माया जग की फाँसी ॥
गुरु मेरे समरथ पुरुष विधाता । गुरुके चरण में मन मेरा राता ॥
रात दिवस है गुरु का ध्याना । यही माँगू गुरु से वरदाना ॥
दोहा–गुरु २ पल २ जीऊँ, राधा स्वामी के गुन गाय ।
अब कुछ मुझको भय नहीं, सतगुरु हुए सहाय ॥
राधास्वामी सतगुरु, दया दृष्टि से देख ।
छुटकारा प्रभु दीजिए, छूटे जगत परेख ॥
तुम दाता मैं दीन हूं, आया गुरु दरवार ।
शरणागत की लाज को, रख लीजे दातार ॥
अब आरत पूरण भई, मन पाया विश्राम ।
राधास्वामी चरण पर, कोटि कोटि परनाम ॥

शाही भूत

प्रथम परिच्छेद

॥ अग्नि कुल वंश ॥

मैं राजपूत हूं। क्षत्रियों में राजपूतों का स्थान विशेष प्रकार का है। अन्य लोग केवल क्षत्री कहलाते हैं। क्षत्रियों की क़िस्में अगणित हैं। कोई देशों पर शासन करता है। कोई सैनिक है। सैनिक का काम सीखकर सेना में भर्ती होना है। कुछ काश्तकार और ज़मींदार हैं। किसी किसी ने लिखने पढ़ने का पेशा ग्रहण कर रक्खा है। किसी किसी ने दुकानदारी और व्यापार का काम ही कर रक्खा है क्षत्रियों में ऐसे लोग भी सम्मिलित हैं जो नीचे दर्जे की सेवा से भी बचाव नहीं करते। यह सब के सब क्षत्री ही समझे जाते हैं और जीवन निर्वाह के उद्यम और धन्धों के कारण उनके नाम पर धब्बा नहीं आता मगर राजपूत की शान इन सब से निराली है। वह राजपूत अर्थात् राजपुत्र कहलाता है।

जिस समय शिकारी क़ौमों ने भारतवर्ष को छीन लिया, क्षत्री अपने असली धर्म से गिर गये। समय की कठिनाइयों से विवश होकर वह हिंदू जाति के मौरूसी देशों की ओर झुके। ऐसी दशा में देश सहायता का अङ्ग अत्यन्त निर्बल हो गया। ऐसा कोई नहीं रहा जो इस देश को शिकारियों (शाका) के पंजे से बचाता और उनके अत्याचारों से छुड़ाता। विवश कुछ तपस्वी ऋषि आबू पर्वत पर गये। तप किया। अन्त में सबने मिलकर

उसी पहाड़ की चोटी पर हवन कुण्ड खोदा। हवन करने लगे अग्नि देवता की बहुत स्तुतियां कीं कि दुनियां में नये क्षत्री पैदा हों मगर अग्नि ने पहिले उनकी कुछ भी सहायता न की तब अन्त में विवश होकर उन्होंने चार मिट्टी के पुतले बनाये एक एक करके उनके धार्मिक संस्कार करने के पश्चात् उनको हवन कुण्ड में डाल दिया और देवताओं से प्रार्थना की कि उनको जीवित कर दिया जाय, ताकि दुनियाँ में आतशी (गर्म) स्वभाव, गर्म हृदय और गर्म दिमाग़ वाले क्षत्री उत्पन्न होकर ऋषियों के देश को फिर शिकारियों के हाथ से वापिस लें, और अपना राज्य स्थापित करें।

देवताओं ने उनकी पुकार सुनी। वह मूर्तियां चमक दमक के साथ हवन कुण्ड से बाहर उछल पड़ीं और ऋषियों को नमस्कार किया। पूछा! "हमारे उत्पन्न करने से आप लोगों का मन्तव्य क्या है? हम दुनियां में क्या कहलायेंगे, किस जाति से हमारा सम्बन्ध होगा और किस जाति के कर्तव्य हमारे सुपुर्द किये जायेंगे? ऋषियों की मनोकामना पूर्ण हुई। वे प्रसन्न हुये और इन मन चले तेजस्वी पुरुषों से कहा—"चूँकि तुम्हारी उत्पत्ति अग्नि से हुई है इसलिये तुम अग्नि कुल वाले कहलाओगे। तुम में अग्नि की चमक दमक रौब दौब और तेज़ी होगी। तुम नये प्रकार के क्षत्री कहलाओगे। तुम्हारे ज़िम्मे यह काम होगा कि तुम शिकारियों से लड़ भिड़कर क्षत्रियों का देश वापिस लो। तुम्हारा वंश दुनियाँ में सर्वदा शासन करे। अग्नि कुल क्षत्रियों ने उत्तर दिया "यह तो ठीक है मगर हमें पुराने क्षत्री अपनी जाति में शामिल न कर सकेंगे। हम केवल पुरुष हैं और ब्रह्मचारी हैं हमारा विवाह किन लोगों में होगा बिना विवाह के वंश किस प्रकार फैलेगा और नये आदमियों को लड़कियाँ कौन हिन्दू देने लगा।" ऋषि हँसे! "इसकी चिन्ता न करो। क्षत्रियों में तुम्हारा विशेष प्रकार का सम्मान होगा।

तुम उनमें मिल जाओगे। बापा रावल की सन्तान जो सूर्यवंशी है और उत्तराधिकार का श्री रामचन्द्र जी से सम्बन्ध रखती है, तुमको असली क्षत्री स्वीकार कर लेगी। तुम चूँकि केवल राज्य करने के लिये बनाये गये हो अग्नि कुल क्षत्री आज से हमेशा के लिये राज पुत्र और राजपूत कहलायेंगे।

"ऋषियों ने इन चारों के चार नाम रक्खे चौहान, परिहार, परिमार और सोलंकी।" ये असली नाम से भारतवर्ष में प्रसिद्ध हैं। चौहान संस्कृत शब्द 'चुस' (चूसन) और सुन व मारने से निकला है। इसका नाम मारना और चूसना। परिहार संस्कृत शब्द परिहरि (छीनने) से है। परमार संस्कृत धातु 'परम' (अच्छा) और 'आर' मंगल से लिया गया है। इसी प्रकार सोलंकी संस्कृत धातु 'सो' (अच्छा) और 'लक' (प्राप्त करने) से निकला है। यह इन नये क्षत्रियों के नाम रखने का नवीन कारण है। संस्कृत में एक कहावत है—यथा नाम तथा गुणः अर्थात् जैसा नाम होता है, वैसा गुण भी होता है। ऐसे नामों के प्रताप से चौहान क्षत्रियों में मारधाड़ करने वाला सूरमा है। परिहार विजयी और धनी पुरुषों पर प्रभुत्व पाने वाला बहादुर है। परमार शक्ति शाली, भाग्यशाली और वीर पुरुष है। सोलंकी आधिपत्य और स्वत्वाधिकार करने वाला सिंह पुरुष है। यह इन नये क्षत्रियों की परिभाषा है। जब से ये उत्पन्न हुए अपने अपने नामों के प्रताप और प्रभाव से न केवल शिकारियों को शनैः शनैः इस देश से अधिकार च्युत (बेदख़ल) कर दिया बल्कि स्वयम् इसके शासक हो गये। यह शिकारी कुछ इस प्रकार हिन्दुओं में घुल मिल गये कि अब इनका हमें नाम निशान तक का पता नहीं।

"मैं भी इस अग्नि कुल वंश से संबंध रखता हूँ।"

'लेकिन क्या मुझ में उन के गुण हैं? यह एक ऐसा प्रश्न है कि जिसका उत्तर देने में बड़ा हिचकिचाहट हो रहा है। मैं

क्षत्री धर्म से गिर गया। मैंने जान बूझ कर इस प्रकार के अनुचित कर्म किये हैं कि रह रह कर आज मुझे पछताना पड़ता है। क्या अच्छा होता कि मेरी मां मुझे जन्म न देती! कुपुत्र हमेशा कुल नाशक होता है।'

"जननी जनती संत जन, दाता ज्ञानी सूर।
कै रहती वह बाँझ बन, क्यों जन्माया कूर॥

"मां को यदि जन्म ही देना था तो वह भक्त, दानी, बुद्धिमान और बीर बालक उत्पन्न करती यदि यह मंजूर नहीं था तो वह बाँझ रहती। मुझ जैसे नीच को क्यों पैदा किया।"

"मैं आज इस एकान्त में अपने जीवन की घटनाओं पर सोच विचार करने के लिये विवश हूं।"

❃ दूसरा परिच्छेद ❃

॥ भ्रष्ट जीवन की अन्तिम [illegible] ॥

"मैं वास्तव में मीरता का रहने वाला हूँ। मां बाप बचपन में ही परलोक सिधार गये। दुर्भाग्य लेकर दुनियां में आया था। मेरा पालन पोषण चाचा ने किया। जब मैंने होश संभाला हर तरह के ऐबों से नाता जोड़ा। भलों की संगत से परहेज और बुरों की संगत से रुचि थी। चचा बड़े सज्जन थे। मुझको प्रायः शिक्षा भी दिया करते थे मगर मैंने उनकी एक भी न सुनी। अन्त में वे निराश होकर चुप रहने लगे। इन्हें ख्याल था कि जिन्दगी का तजुर्बा मेरे लिये सच्चा और श्रेष्ठ शिक्षक सिद्ध होगा, और मैं ज़माने की ठोकरें खाकर सँभल जाऊँगा। मगर ये ग़लत निकला। जो कच्चा फल पेड़ के पत्ते से नीचे गिर जाता है, फिर न तो वह अपनी जगह दुबारा स्थापित किया जा सकता है। और न प्राकृतिक रूप से पक्का पन प्राप्त कर सकता है। उस

को किसी और प्रकार काम में लाओ इसका तुमको अधिक है मगर वह असली पक्के हुये फल का काम नहीं देता। इस.. खट्टापन, कड़ुआपन और कसैलापन का स्वाद होगा। पक्के फल का सा स्वाद कहां !"

"ठीक यही दशा मनुष्य की है। यदि वह बचपन से सुमार्ग पर चला और समय के बुरे प्रभावों से बचा हुआ पक्का कर्मेष्ठी मनुष्य हो गया तो हो गया वरना यदि वह बुरी परिस्थितियों, घटनाओं और प्रभावों के लपेट में आगया तो फिर वह कुछ का कुछ हो जायेगा। वास्तविक मनुष्य न बन सकेगा। गया हुआ समय हाथ नहीं आता। लाख प्रयत्न करो, इसका वापिस लाना सामर्थ्य से बाहर है। प्रायः लोग कहा करते हैं कि सुधार का काम हर समय हो सकता है। यह किसी अंश तक ठीक भी है, मगर हर दशा में और हर पहलू से इसे ठीक कहना अत्यन्त अज्ञानता होगी। यह सम्भव है कि बुरा आदमी संगत और शिक्षा के प्रताप से प्रगट रूप में अपने जीवन का ढंग चाल बदल दे मगर वह अपने पहले कर्मों के प्रभावों को क्या करेगा। वह तो बराबर उससे चिमटे रहेंगे। और सरलता से दूर न हो सकेंगे, हाँ, इतना हो सकता है कि जितना सम्भव है। मनुष्य अच्छा बनने के प्रयत्न में लगा रहे, उसका कुछ न कुछ लाभ तो अवश्य ही होकर रहेगा। यदि किसी आम का फल अब पकाया नहीं जा सकता तो उसका अचार, मुरब्बा, खटाई और अमचूर तो बन सकता है।"

"मेरे जीवन की इमारत की जड़ बचपन ही से दुर्बल थी। ऐसा क्यों था मैं नहीं कह सकता। सम्भव है यह दुर्बलता मुझे मां बाप से प्राकृतिक रूप में उत्तराधिकार में मिली हो, क्यों कि संतान मां बाप की आचरणीय दशा का प्रतिबिंब होती है। मगर मैंने चचा से सुन रक्खा था कि मां मेरी बड़ी भली स्त्री

थी और पिता को सब लोग देवता कहा करते थे। इस कारण से मुझे साहस नहीं होता कि मैं अपने दोषों की जड़ को माता पिता की आचरणीय दशा से सम्बन्धित समझूँ। मैं यह समझता हूँ कि मैं देवता के घर राक्षस उत्पन्न हुआ। इससे अधिक मैं और कुछ यदि कहना भी चाहूं तो कहने का साहस नहीं है।"

"खेल, कूद, जुआ, चोरी लूट पाट और छल कपट की आदत इतनी बढ़ गई कि गांव वासी मेरा नाम सुन कर कानों पर हाथ धरते और दांतों में उँगली दबानेलगे। अभी मैं कठिनता से १२ वर्ष का हुआ था कि चचा की मृत्यु हो गई। अब क्या था, उनका जो नाम मात्र दबाव था, यह भी जाता रहा। तोंबे या करेले की बेल कड़वी तो पहिले ही से थी अब नीम पर चढ़ी। चचा के कोई संतान नहीं थी। मैं ही खानदान का गिराव समझा जाता था। उनके मरते ही पहिले तो मैंने उनका धन कुकर्मों और भोग विलास में उड़ा दिया। कुछ भूमि और जायदाद पर हाथ साफ़ किया। शनैः शनैः उनसे भी वंचित हो गया। जब घर में कुछ न रहा तो किसी महाजन से ऋण लेना आरम्भ किया मगर इससे होता क्या था? खर्च अधिक आमदनी शून्य। जिस टूटे फूटे घर में कई बड़े बड़े छिद्र हो जाँय वह भला कैसे रह सकता है। इधर से पानी डाला उधर से निकल गया। फिर तो ऋण का मिलना भी कठिन हो गया। जो महाजन मूल और ब्याज मांगते तो मैं उन्हें केवल डाट हीं नहीं बताया करता था बल्कि उनकी मरम्मत भी कर दिया करता था। अब सब लोग मुझसे क़तराने लगे और लेना देना पूर्णतया बन्द कर दिया गया। तब मुझे चोरी की सूझने लगी। जिसको सुना कि उसके घर में धन माल है नक़ब लगाई। जिसको निर्बल देखा अवसर देख कर लूट लिया। गाँव के छटे हुये बदमाश मेरे साथी हो गये। मगर यह हालत भी अधिक समय तक न रह सकी। रेत की दीवार को

किसने मज़बूत किया है। वह तो गिरने वाली है। आज नहीं तो कल अवश्य गिर जायगी। गांव वाले सावधान होने लगे। उन्होंने मुझे धमकाया, डराया और सज़ा देने की ठहराई। मैंने मन में सोचा कि बकरे की मां कब तक खैर मनायेगी। आखिर मैं विवश होकर घर से बाहर निकला और छटे हुये साथियों को लेकर निर्जन पहाड़ी पर रहने लगा। आने जाने वाले यात्रियों पर हाथ साफ़ करना आरम्भ किया। कई वर्ष इसी तरह व्यतीत किये। अन्त में जब ज़ोर शोर के साथ मेरा पीछा होने लगा मुझे वहां से भी भागने की सूझी। मैं इतना भाग्य शाली अवश्य था कि किसी के हाथ नहीं आता था। जिस तरह चीते बिल्ली व अन्य शिकारी पशु चौकन्ने रहते हैं, और कठिनता से पकड़ में आते हैं उसी होशियारी और सावधानी की आदत मुझ में भी थी। जहां मुझे विश्वास हो गया कि अब यहां ठहरने में खैरियत नहीं है। मैं तुरन्त वहां से कूच कर दिया करता था।" मैंने जीवन का बहुत कुछ ऊँच नीच देखा, कभी तो धन मेरे पास बहुतायत से रहता था और कभी मैं बिलकुल ही निर्धन हो जाता था। लेकिन मन-चला आदमी था, आपत्तियों और कठिनाइयों से घबड़ाता नहीं था। नई २ बातें सूझा करती थीं।"

'जब मैंने देखा कि डाका मारने और लूट पाट करने से काम नहीं निकलता, मैंने अपने आपको मारवाड़ का राजकुमार मशहूर किया और साथियों को इस ढङ्ग से सिखाया पढ़ाया कि वह जहां जिस रियासत में जाते यह सुना देते थे कि मैं नाराज़ हो कर घर से बाहर निकला हूं। इसका परिणाम यह हुआ कि मैं जहां २ गया, वहां मेरा बड़ा आदर सम्मान हुआ और हज़ारों की रक़म मुझे भेंट में हर जगह से मिलती रही। मारवाड़ के राज-कुमार की दृष्टि से राजस्थान में मेरा विशेष आदर है राजे समझते थे कि अन्त में यह किसी समय मारवाड़ का राजा होगा।

वे न केवल मेरा आदर करते थे बल्कि मेरे प्रेम और मित्रता का दम भी भरते थे। इस ढङ्ग से मैंने इनको खूब लूटा। कई रईसों ने अपनी लड़कियां भी देनी चाहीं मगर यह ऐसा नाजुक मामला था कि मैं राज़ी न होता था। उससे भांडा जल्द फूट जाने और क़लई खुल जाने का भय था, यह कारण था कि मैं स्त्री का नाम सुनकर डरता रहता था। लेकिन यह दशा भी अधिक दिन नहीं रही। अन्त में जब मुझे ज्ञात हुआ कि लोग मुझे संदेह की दृष्टि से देखने लगे हैं। मैंने राजस्थान को त्याग दिया और आगरे चला आया। वहां भी यही चाल चलने लगा। पहिले शहर में एक शानदार मकान लिया। जौहरियों को माल खरीदने का लालच दिया। वह आये और राजकुमार समझ कर जवाहरात और मूल्यवान वस्तुयें धरोहर रखते गये। मैं उन्हें मूल्य तो क्या चुकाता, अवसर देख कर अधिक माल टाल हाथ आते ही एक जगह से दूसरी जगह मकान बदल देता। शहर के जौहरी डरे और मेरी तलाश और गिरफ्तारी के लिये पीछे लगे। आगरे में अकबर का राज्य है अकबर बुद्धिमान बादशाह है। उसने चुन २ कर और अनुभवी अफ़सर नौकर रखे हैं, जो आकाश के तारे तोड़ लाने का दावा करते हैं"

"जब बादशाह को मेरे लूट पाट की सूचना मिली उसने अपने मंत्री टोडरमल को मेरे गिरफ्तार करने के लिये नियत किया। यह आदमी अत्यन्त मक्कार व होशियार है। आदमी शैतान को तो धोका दे सकता है मगर टोडरमल की आंख में धूल डालना असम्भव काम है। उसने और उसके आदमियों ने मुझे अन्त में गिरफ्तार ही कर लिया। मैं बादशाह के सामने पेश किया गया।"

"मेरी मुश्कें कसी हुई थीं। बादशाह दीवान खास में बैठा हुआ था। उसके साथ टोडरमल, बीरबल और कई राजपूत बैठे

हुये थे। सिपाहियों ने मुझे हथकड़ी, बेड़ी डाले हुये उपस्थित किया। टोडरमल ने हाथ से इशारा किया। वह बाहर चले गये। केवल थोड़े आदमी, जो बादशाह के विश्वास पात्र थे, उसके साथ रह गये।"

अकबर मुझ से बोला-"राजपूत ! क्या तू मीरता का रहने वाला है और तेरा नाम.....है।" "मुझे यह सुनकर आश्चर्य हुआ। यह मेरे नाम व निशान से किस तरह परिचित हो गया। क्या किसी साथी ने ग़द्दारी की। मगर नहीं। बाद को मालूम हुआ कि अकबर के जासूस राजस्थान में मेरे रहन सहन की ख़बर रखते थे उनके कारण अकबर और उसके मन्त्रीगण भली प्रकार जान गये थे कि मैं कौन हूं।"

मैंने उत्तर दिया -'हां ! मेरा यही नाम है।'

अकबर ने पूछा-'क्या तू लूट पाट और चोरी करने और डांका मारने का काम नहीं किया करता था ? क्या आगरा आने से पहिले तू अपने आपको मारवाड़ का राजकुमार प्रसिद्ध करके राजाओं को धोका नहीं देता था ?'

मैंने कहा-'हां ! मैंने ऐसा ही किया है।'

अकबर ने प्रश्न किया-'तू स्पष्ट शब्दों में अपना अपराध स्वीकार कर रहा है, मगर पहिले तूने कभी ऐसा नहीं किया, इसका क्या कारण है ?'

मैं बोला-'इसके दो कारण हैं। प्रथम तो आजतक किसी ने मुझे गिरफ़्तार नहीं किया और न मुझ पर किसी का दाव चला, मैं स्वीकार या अस्वीकार किस प्रकार करता। दूसरे मेरे हृदयांकित हो गया है कि आपको मेरे कुल हालात से परिचय प्राप्त है। अतः यदि मैं अस्वीकार भी करूँ तो उससे लाभ क्या होगा ?' अकबर हँसा "सच्ची बात है, लेकिन यह बतादे कि यदि तुझे कोई व्यक्ति गिरफ़्तार करता तो क्या तू उसे

भी अपने परिचय दे देता ?"

मैं बोला—"नहीं, मैं कभी ऐसा न करता। जान चाहे चली जाती मगर अङ्गीकार करने वाली बात को सदा अस्वीकार ही करता।" अकबर ने प्रश्न किया—"इस अवसर पर इस स्पष्टता के साथ उत्तर देने की विशेषता का कारण क्या है ?"

मैंने कहा—"इस प्रश्न का उत्तर मैं दे चुका हूँ। इसका दूसरा भाग जो शेष रह गया है, वह यह है कि मेरे साथ जो आदमी हैं उनकी जान का भय रहता है। मैं कभी भूल कर भी अपने साथ इनको फँसाना पसन्द न करता। चोर और डाकू नियम के पाबन्द होते हैं। उनकी मित्रता सदा विश्वास के योग्य होती है। वह चाहे खुद फाँसी पर लटका दिये जाँय मगर यथा-शक्ति अपने मित्रों पर कोई आपत्ति नहीं आने देते। यह इस गिरोह का मुख्य नियम है।"

अकबर हँसा। टोडरमल ने तालियां बजाईं। कई सिपाही आये और मेरे कुल साथियों को हथकड़ी बेड़ी पहिने पेश किया। मैं देखकर अचम्भे में रह गया। मुझे यह ज्ञात नहीं था कि यह भी मेरी तरह गिरफ़्तार हो गये हैं। यह काम किस ढंग पर किया गया था मुझे इसके विषय में तनिक भी जानकारी नहीं है, क्योंकि मेरे साथी सब के सब एक जगह नहीं रहते थे। सब अवसर की तलाश में रहते थे। मैंने प्रायः आदमियों के लिये जगह अलग २ नियत कर रक्खी थी।"

अकबर बोला—"देख ! यह सब तेरे साथी हैं या नहीं ?"

"मैंने सिर झुका लिया और चुप हो गया।"

अकबर ने पूछा—"तू अपराधी है अपने अपराध को स्वीकार भी करता है। प्रत्येक अपराध का दंड है और तुम्हें दण्ड मिलना चाहिये। अब बता ! तुझे क्या दण्ड दिया जाय ?"

मैं बोला—"आज तक किसी हाकिम ने अपराधी से यह

प्रश्न नहीं किया और न क़ानून उसको अपनी सज़ा आप तज बीज़ करने का हक़ देता है, इसलिये यदि मैं कुछ कहूँ भी तो क्या कहूं। हां, इतना कहने का निस्सन्देह साहस होता है, कि आप जो सज़ा मुझे देना चाहते हैं वह दीजिये। मेरे साथियों को छोड़ दीजिये। उनका कोई अपराध नहीं है। यह मेरे इशारों पर काम करते थे। यह मेरे हथियार थे। हथियार को दण्ड देने से कोई लाभ नहीं होता। अपराध तो हथियार के चलाने वाला ही करता है।"

अकबर मुसकराया–"राजपूत! अन्ततः राजपूत ही है। मैं तेरी इन अन्तिम बातों से बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। अब यह तो बता कि तू क्या चाहता है।" मैंने कहा–"कुछ भी नहीं। मुझे केवल अपने मित्रों के छूट जाने की इच्छा है। इसके अतिरिक्त और कोई प्रार्थना करना नहीं चाहता।"

अकबर हँसा। आंखों से संकेत किया। टोडरमल ने फिर तालियां बजाईं। सिपाही आये और उसकी आज्ञा से सब के हाथ पांव खोल दिये गये। टोडरमल ने उनसे कहा–"तुम स्वच्छन्द हो, जहां चाहो जा सकते हो। हां, अब चोरी और धोके बाज़ी से सम्बन्ध न रखना। इस बार बादशाह तुम को क्षमा प्रदान करते हैं, फिर इस क्षमा का अधिकार न रहेगा।"

"मेरे साथियों ने बादशाह को प्रणाम किया और वह दीवान ख़ास से बाहर कर दिये गये।"

अकबर फिर मुझ से बोला—"राजपूत! सच्चे क्षत्री चोर नहीं होते क्या तुझे इस कर्म से लाज नहीं आती?" मैंने कहा—'मरता क्या न करता। दरिद्रता जीवन की यातना है। इसके कारण मनुष्य दुखी है। आह! यदि मेरी दशा निर्धनता की न होती, तो मैं कभी ऐसा न करता।'

अकबर बोला–'इसका उपाय सम्भव है। आज से मैं तुझे

टोडरमल के सुपुर्द करता हूं। वह तुझे शिक्षा देंगे और यदि तू विश्वास पात्र साबित हुआ तो न केवल मालामाल कर दिया जावेगा, बल्कि तुझे कई पीढ़ियों तक के लिये जागीरें दी जायगीं क्या तू राज सेवा के लिये तत्पर है ?"

मैंने उत्तर दिया–"अन्धा क्या चाहे, दो आंखें। नेकी और पूछ पूछ। आपकी यदि इतनी कृपा है तो मैं आप पर अपने प्राण निछावर करने के लिये सहमत हूं।"

अकबर हँसा "देखा जायगा। यदि तू परीक्षा में पूरा उतरा तो मेरे दरबार के अमीरों में तुझे जगह दी जायगी। प्रतिकूल दशा में तू आप जानता है कि तू किस व्यवहार के योग्य होगा। मैंने गरदन नीची करली, टोडरमल के तालियां बजाने पर सिपाही लोग आये। मेरी मुश्कें खोल दी गईं और बादशाह को सलाम करके मैं उसके साथ दरबार ख़ास से बाहर आया। मेरे रहने के लिये एक सुन्दर और स्वच्छ महल ख़ाली कराया गया मेरे साथी भी बाद को मेरे पास आये और मैं टोडरमल की सङ्गत में रह कर उस काम की पूर्ति करने के लिये आवश्यक शिक्षा प्राप्त करने लगा।"

❀ तीसरा परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्ट जीवन का पालन-पोषण ॥

"मैं कई मास तक आगरे में रहा। टोडरमल ने मुझे शीघ्र ही काम काज करने के योग्य बना दिया। मेरी समझ में आगया कि बादशाह ने मुझे किस कार्य के लिये उपयुक्त (मौज़ूँ) समझा है। मैं हज़ार बुरा था, चोर, डाकू, बेईमान, धोकेबाज़, जो जी में आये मुझ से कहलो, मगर अब तक मुझे चूँकि दरबारियों की संगति प्राप्त नहीं हुई थी, मैं उनके प्रभाव से अपने को बचा हुआ पाता था। दुनियां के लोगों से मिलने पर भी अब तक मेरे

मन और बचन में अन्तर नहीं आया था। जो मन में उठता था, उसे मुख से कह डालता था। अपने भावों के छिपाने की सामर्थ्य मुझ में नहीं थी और साथ ही निडर था, लेकिन दरबारियों की थोड़े दिन की सङ्गति से विचित्र प्रकार का परिवर्तन आगया। वह नहीं रहा जो पहिले था। अब मेरे मन और बचन में कोसों का अन्तर हो गया। विचार कुछ और है, और वाणी से निकलता कुछ और है अब तक मैं राजस्थान का असभ्य जंगली आदमी था। आगरे के रहन सहन ने मुझे सोच समझ वाला बना दिया। मैंने चापलोसी और छल कपट सीखा। किसी की आँख देखी नहीं कि उसके इरादे को भाँपा नहीं, और उसी तरह के शब्द उसके भेद लेने की नीयत से मेरे मुँह से निकलने लगे। मैं उड़ती हुई चिड़िया को पहँचानने लगा और वह उपाय भली भाँति जान गया जिससे आदमियों को बस में लाया जाता है और उन पर अपना प्रभाव डाला जाता है।"

बोली साफ़ हो गई। सभ्यता अन्य प्रकार की हो गई। जिस प्रकार गाने वाला मीरासी जिस महफ़िल में जाता है, उसके अनुसार राग छेड़ देता है। मुसलमानों में मुसलमान, हिन्दुओं में हिन्दू, ज्ञानी, ध्यानियों में ज्ञानी ध्यानी और दुराचारियों में दुराचारी। तात्पर्य कि जिसके पास गया उससे दूध और चीनी की तरह मिलकर एक हो रहा और हृदय में घर कर लिया। बातें ऐसी करने लगा जो न सच होती थीं न झूँठ और प्रत्येक व्यक्ति अपनी २ समझ के अनुसार उन्हें सच ही समझ लेता था और अगर यदि ईश्वर न करे, कि वह झूँठी पड़ जातीं तो मुझे अपने शब्द याद रहते थे और मैं उनको लौट फेर करके लोगों का मुँह बन्द करने पर समर्थ हो जाता था। वह मुझे झूँठा नहीं बना सकते थे। यह कमाल यदि किसी गिरोह में होता है तो वह केवल दरबारी लोग होते हैं।

"पहिले मुझे इतनी योग्यता नहीं थी कि क्रोध, लाज, शरम तथा लालच को दबा रखता। अब यह योग्यता आगई कि मन में तो किसी से घृणा है मगर बातें ऐसी हो रही हैं कि प्यार प्रीति प्रगट हो रही है। मुझे किसी वस्तु की चाहना तो है लेकिन प्रगट रूप से बर्ताव में खरा और निर्लोभ बना हुआ हूं। यदि साधु महात्माओं में जाने और उनकी संगति में बैठने का अवसर हाथ आजाय तो कोई यह न कह सके कि मैं साधुपने के रंग में रँगा हुआ नहीं हूँ। ज्ञान के शब्द जिभ्या पर रहते थे। यदि गाँव वालों और गँवारों से मिला तो उन जैसा हो गया। सभ्य लोगों के साथ बैठा तो क्या सामर्थ्य कि कोई यह जान ले कि मैं सभ्य और शिक्षित नहीं हूँ। मुसलमानों के मुहावरे ज़बान पर चढ़ गये। बोल चाल में सभ्यता आगई। अनुकरण करने का गुण मुझ में पहले से ही मौजूद था। जो दरबारियों को करते हुये देखा, कहते हुये सुना, तुरन्त उसकी नक़ल उतार ली, और मैं थोड़े ही दिनों में सच्चा दरबारी बन गया।"

"टोडरमल मुझ से खुश था और कहा करता था कि तुम बड़े काम के आदमियों में से हो। मैं अपनी प्रशंसा को सुनकर ऐसा प्रसन्न हो जाता था कि मानो मुझे सात लोक का राज्य मिल गया हो। जिन लोगों ने पहले मेरा साथ दिया था, अब मैं उनको घृणा की दृष्टि से देखने लगा। इनमें वह तमीज़ कहां थी जो मुझे दरबारियों की संगत से मिली थी, मगर मैं उनपर अपने हृदय के भावों को प्रकट नहीं होने देता था। और यह नीयत हती थी कि ये मेरे शस्त्र बने रहें। उनका प्रेम मन में लेशमात्र भी नहीं रहा। वे थे भी पशु। बुद्धिमान मनुष्य अपना काम तो पशुओं से निकाल लेता है, लेकिन क्या वह पशु हो जाता है और पशुओं की प्रीति का दम भरा करता है? कभी नहीं। वह तो केवल अपने स्वार्थ के लिये पाले जाते हैं। टोडरमल ने मेरे

हृदयांकित करा दिया था कि चतुर मनुष्य वह है जो साँप को तो मारदे मगर इस प्रकार काम करे कि साँप मरे और लाठी न टूटने पावे। सावधान रहना बुद्धिमता की शान है। स्वयम् कभी साँप के छेद में अपनी उँगली न डाले। दूसरों ही को उसके लिये आकर्षित करे यदि सांप पकड़ लिया गया तो कीर्ति और सन्मान प्राप्त हुआ और यदि कहीं साँप ने डस लिया तो आप तो नहीं मरे। अगर दूसरा व्यक्ति मर गया तो अपनी बला से। मैंने यह सबक़ ख़ूब याद कर लिये थे।"

"जब टोडरमल ने देखा कि मेरी शिक्षा पूर्ण होगई है, वह मुझे एक दिन अकबर बादशाह के समीप लेगया। मैंने दरबारी ढंग से झुक झुक कर सलाम किये। तीन बार भूमि को चूमा और शिष्टाचार के साथ चुप चाप खड़ा रहा। अकबर ने मुझे सिर से पांव तक देखा। प्रसन्नता प्रगट की। पहिले इसके नेत्रों से गंभीरता टपकती थी लेकिन उसने जब मुझे भली प्रकार देख लिया, मुस्कराया! टोडरमल की ओर संकेत किया।"

टोडरमल ने कहा–'हुज़ूर! यह व्यक्ति बड़े काम का आदमी निकला। यह बड़ा भारी अवसर वादी और पुरुष लक्षण का जानकार है।'

अकबर बोला–"अच्छा हुआ। फिर इसका सम्मान बढ़ना चाहिये।"

टोडरमल–मेरी ओर (देखकर) "जहांपनाह (बादशाह) तुम से प्रसन्न हैं। यदि तुमने भली प्रकार राज सेवा की तो तुम्हें बहुत बड़ा ओहदा या पद दिया जायगा। सम्भव है कि कहीं जागीर भी प्रदान करदी जाय मगर इसका प्रबंध तुम्हारी योग्यता पर निर्भर है।"

मैंने सिर झुकाकर और हाथों को माथे पर लाकर धन्यवाद प्रगट किया। बादशाह ने फिर संकेत किया और उसी समय

मुझे पोशाक (सिरोपाव) दी गई और सुवर्ण के मूंठ वाली तलवार मिली। मैं तो तन बदन में फूला न समाया। आज मेरे भाग्य का नक्षत्र उन्नति पर आगया। अकबर का कृपा पात्र बनना कोई साधारण बात तो नहीं थी। अब मैं राजस्थान का नीच और अपमानित बटमार नहीं था। अभी तो केवल असली जीवन का प्रारम्भ हुआ है। आगे चलकर न मालुम मुझे धन और मान की दृष्टि से कितनी उन्नति करने का अवसर हाथ आ जायेगा। मेरा हृदय अन्दर ही अन्दर कल्पनाओं के हवाई क़िले बनाने लगा। बादशाह ने मुझे बिदा किया। फिर मैं उसी प्रकार झुक झुक कर प्रणाम करके अपने निवास स्थान पर आया। साथियोंको अपने कृपा पात्र बनाये जाने की शुभ सूचना सुनाई। उनकी खुशी की कुछ न पूछिये। वह ऐसे प्रसन्न हुये कि मानो पोशाक आदि उनको ही मिली है। मूर्ख और अनसमझ आदमी की ऐसी ही दशा हुआ करती है मगर ईश्वर का धन्यवाद है कि अब मैं अन समझ और मूर्ख नहीं रहा। बादशाह की दया दृष्टि और टोडर मल की संगत और शिक्षा ने मुझे अति शीघ्र कुछ का कुछ बना दिया था।

—❀—

* चौथा परिच्छेद *

॥ भ्रष्ट जीवन का कारोबार ॥

"मैं इस उत्सव वर्द्धक घटना के पश्चात् एक सप्ताह आगरे में और रहा। अब्बुलफ़ज़ल अकबर का प्रधान मन्त्री था और अब्दुल रहीमखां खानखांना सिपहसालार था। इन दोनों ने मुझ पर बड़ी कृपा की थी। हर तरह की ऊँच नीच समझाते रहे। हर समय सहायता देने का बचन दिया। यह सब बातें पूरी हो चुकीं। मैं टोडरमल की आज्ञा पाकर अपने साथियों को ले कर राजस्थान की ओर चल खड़ा हुआ।"

"अजमेर से गुजरते हुये और रोज़ाना मंज़िलें तै करते हुये मैं मारवाड़ की सीमा में निकला। पहिले अपनी जन्म-भूमि मीरता में गया। मेरे अपने ख़ानदान में तो सिवाय एक दो स्त्रियों के कोई जीवित नहीं रहा था। यह मुझे देख कर प्रसन्न हुईं। मौरूसी इलाक़ों के अधिक भाग पर तो महाजनों का अधिकार होगया था। केवल थोड़ा सा भाग बच रहा था, जिस पर निर्धन स्त्रियाँ जीवन निर्वाह करती थीं। मेरे पास इस समय धन की कमी नहीं थी। प्रथम तो जौहरियों के जवाहरात हाथ में आगये थे। दूसरे आगरे में बादशाह ने मुझे माल्लामाल दिया था। मैंने महाजनों को बुला भेजा। उनका रुपया चुकता कर दिया और क़स्बे के दूसरे आदमियों को भी जिनको मैंने किसी प्रकार की हानि पहुँचाई थी अपने व्यवहार से प्रसन्न किया। यह टोडरमल की आज्ञा भी थी, क्योंकि अगर ऐसा न करता तो आगे मुझे अपने काम में कठिनता से सफलता होती। मैं कुछ दिनों अपनी जन्म भूमि में रहा। सब लोगों को मालूम होगया कि अब मेरा जीवन बिल्कुल पलट गया है, और मैं ख़तरनाक नहीं हूं। अत्यन्त प्रेम प्रीति करके मैंने उनको अपना विश्वासपात्र बना लिया। साथियों को मैंने चेतावनी देदी कि मेरे आगरे जाने का समाचार किसी को कानों कान ज्ञात न होने पावे। उनको क्या प्रयोजन था जो व्यर्थ की छेड़ छाड़ करते। मगर इस बात से अचम्भे में थे कि इतना अधिक धन कैसे मेरे हाथ आगया। मैंने बातें बनाकर और उलटी सीधी समझा कर उन्हें संतुष्ट कर लिया। इस कला में मुझे निपुणता प्राप्त हो गई थी। वे जानते भी थे कि मीरता छोड़ने पर मैं डाकू हो गया था। किसी ने समझा कि यह दौलत डाँका मारने से हाथ आई है। किसी ने और कुछ ख्याल किया। मैंने इसी एक बात में मसलहत देखी कि यह सन्देह में पड़े रहे। इस समय में डांका मारना एक साधा-

रण काम है। किसी राजपूत को कोई इस कारण से बुरा भला नहीं कह सकता। बून्दी का रावदेवा प्रारम्भिक जीवन में यही काम किया करता था। यदि वह डाकू न होता तो शायद बूँदी का आज चिन्ह तक दृष्टिगोचर न होता देहली व कन्नौज के राजाओं के नष्ट होने पर चौहान और राठौर राजस्थान में आकर ऐसा ही करने लगे थे। यह कारण है कि मुझसे किसी ने पूछ ताछ नहीं की।"

"जब मैं कई महीने मीरता में रह चुका, बाहर निकलकर किसी राज्य में नौकरी करने की इच्छा प्रगट की। मीरता के कई राजपूत मारवाड़ के दरबार में अहलकार थे। वहां पर नौकरी मिलना कठिन नहीं था, मगर मैं तो किसी और ही धुन में था। शाही अमीर होने पर किस को अच्छा लगता कि राजाओं की नौकरी करता। इसके अतिरिक्त मैंने टोडरमल की आँखें देखी थीं। टोडरमल ही एक ऐसा हिन्दू था जिसने वास्तविक रूप से मुग़ल राज्य की जड़ मज़बूत करदी थी। वह राज्य की इमारत का सबसे अधिक शक्तिशाली स्तम्भ है, चप्पा २ ज़मीन की पैमाइश कर डाली। गणित विद्या में अद्वितीय है अकबर कहा करता था, कि टोडरमल से अधिक वह किसी का सम्मान नहीं करता। टोडरमल मेरा गुरु था मेरे भी हृदय में इच्छा थी कि मैं अपने आपको ऐसे गुरु का योग्य शिष्य सिद्ध करूँ।"

"इस विचार से मैं एक दिन मीरता से बिना किसी से कहे सुने चित्तौड़ की ओर चल पड़ा। दस बीस आदमी साथ थे। कई दिन के बाद मैं वहां पहुँचा। चित्तौड़ में महाराणा उदयसिंह उस समय राज्य करता था। मैंने उससे मिलने का संकल्प किया परन्तु यह राणा इतना चौकन्ना मनुष्य था कि हर किसी से मिलने की उसे सौगन्ध थी। सौदागर और साहूकारों तक को चित्तौड़ में महीनों रहना पड़ता था। तब कहीं बड़ी कठि-

नता से दीवान की सिफ़ारिश करने पर राणा के दरबार में हाज़िर होने की आज्ञा दी जाती थी। मेरे साथ भी वही बर्ताव किया गया। मैंने धीरे २ जैमल और उसके विश्वासपात्र पुत्तूसिंह से मेल जोल बढ़ाना शुरू किया और इनके सहारे से उदयसिंह के दरबार में गया। यदि कहीं उदयसिंह को यह मालूम हो जाता कि मैं दहली से आ रहा हूँ तो शायद मुझे अपने पास तक न आने देता। मगर वहां कौन था जो राणा को यह सूचना देता। राणा अकबर के नाम से चौकन्ना रहता था। यद्यपि अकबर ने इससे मिलने जुलने और परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने की कोशिश की, मगर हमेशा असफलता रही। टोडरमल की युक्ति भी यहां काम नहीं आई और न राणा के सामने इसकी दाल गल सकी। अकबर ने राजस्थान के क़रीब २ समस्त राजपूत राजाओं से सम्बन्ध पैदा कर लिया था लेकिन यदि कोई इसके चंगुल में नहीं आया तो केवल चित्तौड़ का महाराणा ही था। इसने आगरे के बादशाह की ओर तनक भी ध्यान नहीं दिया, अकबर को इस बात का रंज रहता था। हुमायूँ मरते समय उसे नसीहत कर गया था कि राजपूतों को अपना बना लेना। उसके बाप हुमायूँ को राजपूतों ने बहुत सहायता दी थी। हुमायूँ मुसलमानों की अपेक्षा राजपूतों का अधिक विश्वास करता था। मगर उनको अपना आज्ञाकारी और शुभचिन्तक न बना सका। मगर स्पष्ट शब्दों में अकबर को समझा गया कि यदि राजपूत उससे मिल गये तो फिर मुग़ल खानदान को किसी अन्तरीय या बाहरी शत्रु का भय न रहेगा। अकबर ने किसी को पराजय किया, किसी से कृतज्ञता प्रगट की, किसी २ खानदान की लड़कियों से शादी करके नाता जोड़ा, मगर राणा पर इसका दाव नहीं चला। लेकिन वह हमेशा उसको अधीन करने की चिन्ता में रहता था। जब और कोई उपाय समझ में नहीं आया तो उसने मुझे इस काम

के योग्य समझ कर चित्तौड़ की तरफ रवाना किया। इसकी आज्ञा थी कि राणा का हृदय जिस तरह हो सके उसकी ओर आकर्षित किया जाय और अगर वह मुग़ल का साथ देना बिलकुल अस्वीकार करे तो फिर इस खानदान का नाम ही शून्य की तरह मिटा दिया जाय। मेरा यहां आने का मन्तव्य यही था।"

"मैं एक दिन राणा के सामने उपस्थित किया गया।"

राणा ने पूछा—"तुम कौन हो, कहाँ रहते हो, और किस अभिप्राय से यहाँ आये हो ?"

"सूचना तो उसे पहिले ही से थी मगर रीत्यानुसार यह प्रश्न किये गये थे।" मैंने उसे उत्तर दिया—"मेरा नाम ..... है। मैं मीरता का रहने वाला हूं। आध सेर आटे के लिये दरबार में हाजिर हुआ हूँ।"

राणा हँसा—"मारवाड़ देश तो मेवाड़ से बहुत बड़ा है। वहां तुमको क्यों नौकरी नहीं मिली ?" मैंने निवेदन किया—"मुझे हिन्दूपति की सेवा के गौरव प्राप्त करने की लालसा है।"

"मेवाड़ के राणा हमेशा सदा से हिन्दूपति कहलाते हैं। यह इनका मौरूसी खिताब है। इसका कारण केवल यही नहीं है कि वह सूर्य वंशी क्षत्री और श्री रामचन्द्र जी की संतान हैं। बल्कि मुख्य कारण यह है; कि इस खानदान में हिन्दूपन की निराली शान है और इस शान की वजह से उनके पांव के अँगूठे से समस्त राजाओं के माथों पर तिलक लगाया जाता है। राजपूत तो अपनी असलियत से गिरते पड़ते चले जा रहे हैं मगर इस खानदान ने अपनी आन को अब तक स्थिति रक्खा है। एक उदाहरण भी ऐसा नहीं मिलता कि जिससे सिद्ध किया जा सके कि उसने अपनी शान सुरक्षित रखने में ग़लती की हो। अकबर को भय था कि कहीं सब के सब राजपूत इसके प्रभाव में आकर मुग़ल राज्य के लिये

ख़तरनाक न साबित हों, क्योंकि सबके दिलों में इस ख़ानदान की प्रतिष्ठा दृढ़ता से बैठी हुई है। यही कारण है कि वह उसे अपने आधीन करना चाहता था। 'हाथी के पांव में सबके पांव।' अगर यह ख़ानदान अकबर के हाथ में आजाता तो फिर औरों की ओर से उसे बे फ़िक्री हो जाती मगर राणा इससे हमेशा बचता था।" राणा ने कहा—"मेरे यहाँ वेतन कम दिया जाता है।"

मैंने प्रार्थना की—"मैं वेतन के लिए उपस्थित नहीं हुआ हूँ। मैं तो केवल सेवा का गौरव प्राप्त करने आया हूं।"

राणा ने जैमल से कहा—"इसके बारे में सोचकर उत्तर दिया जायगा।"

"चित्तौड़ के राणाओं का एक यह भी स्वभाव है कि वह किसी बात का उत्तर बिना सोचे समझे नहीं देते, और न जल्दी फ़ैसला सुनाते हैं।"

"मैं दो महीने वहाँ रहा। जैमल ने अच्छी तरह मेरा हाल मीरता से पूछ ताछ कराया और जब उसे विश्वास हो गया कि सिवाय लूट मार करने और डांका मारने के मुझमें कोई अन्य अवगुण नहीं है, तो मुझे राजपूतों के एक रिसाले का अफ़सर बना दिया गया। और मैं वहाँ रहने लगा। मेरे आदमी बहुत आज्ञाकारी थे मैंने इनके द्वारा टोडरमल को चित्तौड़ के कुल हालात से परिचित करा दिया और यह काम मैंने इतने अच्छे ढङ्ग से किया कि किसी को मेरे बारे में भूलकर भी संदेह नहीं हुआ।"

मैं हृदय से तो यह चाहता था कि किसी प्रकार राणा अकबर की आधीनता स्वीकार करले, मगर यह असम्भव था और उसे कोई समझा भी नहीं सकता था। वह दूरदर्शी नहीं था और न जमाने का रुख पहँचानता था। मुसलमानों का सामना करना सरल काम नहीं था। वह बराबर एक २ करके समस्त देश

पर विजय प्राप्त करते चले आरहे थे । राणा ने इस पर कभी ध्यान नहीं दिया, वरना इसके विरुद्ध दूसरी तरह की कार्यवाही करने कराने की आवश्यकता न होती । इसके अतिरिक्त नौकर होने पर उसका कोई अफ़सर उसे दबाने का साहस नहीं कर सकता था । वह स्वयम् एक २ बात की देख भाल करता था । किसी की सामर्थ्य नहीं थी कि उसे चकमा दे सके या उसकी आज्ञा को भंग कर सके ।"

"महीनों व्यतीत हो गये । इसके स्वभाव में तनिक भी परिवर्तन नहीं हुआ । मैंने टोडरमल को स्पष्ट रूप से लिख दिया कि इसका ठीक होना कठिन है । यदि किसी और ढङ्ग से काम करने का प्रयत्न हो तो उसका प्रबन्ध हो सकता है ।"

—❀०❀—

❀ पांचवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्ट जीवन के नीच सम्बन्ध ॥

"मैं चित्तौड़ में रहने लगा, उदयसिंह को सूअर के शिकार का बहुत शौक़ था । वह स्वभाव से ही भोग विलास तथा सुखाभिलाषी था मगर इस पर भी वह प्रायः आखेट आदि के बहाने बाहर जङ्गल को चला जाता था और उसके साथ या तो मेवाड़ के सरदार रहते थे या जैमल सिपहसालार रहता था । दूसरों को वह यह अवसर नहीं देना चाहता था । मुझे केवल एक ही बार उसके साथ शिकार में जाने का अवसर प्राप्त हुआ था ।"

"जब मैं राणा के साथ था, रामपुर नामी गांव में होकर निकला, जिसमें गहलौत राजपूत बसते थे । यह भी राणा की तरह अपने आपको बापा रावल की संतान कहते हैं । जब राणा का दरबार होता है, वहां बुलाये जाते हैं । उनके साथ वैसा ही व्यवहार किया जाता है जैसा किसी एक खानदान वाले [illegible] हक़ [illegible] मैंने [illegible] ला के [illegible] रे एक सुन्दर युवती को [illegible] ते [illegible] ।

इसका रूप रंग बड़ा चित्ताकर्षक था। मैंने अपने साथियों से जो इस गाँव में आते जाते थे पूछा—'यह कौन है ?' उत्तर मिला। 'यह गांव के सरदार.........सिंह की पुत्री है। इसका नाम चंपावती है।' इस लड़की के रूप ने मेरे ऊपर ऐसा प्रभाव डाला कि मुझमें फिर उसके देखने की लालसा हुई। शिकार से लौटने पर तो मुझे विवश राणा के साथ चित्तौड़ चला जाना पड़ा, मगर दो चार दिन बाद जब अवकाश मिला, जैमल से आज्ञा लेकर मैं वहाँ आया और जान बूझकर गहलोत राजपूत के घर अतिथि हुआ। वह जानता था कि मैं राणा का माननीय सिपाही हूं। उसने बड़ा स्वागत किया। चम्पावती को मैंने फिर दुबारा देखा। मुझे या तो पहले स्त्रियों के नाम से घृणा थी या अब हृदय में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि जिस तरह सम्भव हो, यह लड़की मुझे मिल जाय। पहली बार तो ऐसे नाजुक विषय पर बातचीत करना खतरा मोल लेना था। मैंने अपने भावों को रोक रक्खा और बार २ इसके देखने की लालसा से वहां आया गया।"

"यद्यपि किसी को मेरे बारे में किसी प्रकार का सन्देह नहीं था मगर जैमल फिर भी बड़ा चौकन्ना था। इसकी दृष्टि प्रत्येक सैनिक पर रहा करती थी। जब उसे मालूम हुआ कि मैं बहुधा रामपुर आया जाया करता हूँ, उसे आश्चर्य हुआ। मेरी रहन सहन की निगरानी के लिए उसने आदमी नियत किये। मुझे खबर नहीं थी मेरी देख भाल हुआ करती है। इस बात का पता मुझे कुछ दिन पीछे लगेगा।" एक दिन जैमल ने पूछा—"राजपूत ! रामपुर क्यों जाया करता है ?"

"मैं लज्जित हुआ। कुछ उत्तर न दे सका," जैमल ने कहा—"सच्ची २ बात बतादो। ऐसा न हो कि कोई तुझे सन्देह की दृष्टि से देखने लगे। यह समय नाजुक है। मुगलों के जासूस

स्थान २ पर फिरते रहते हैं। अगर एक बार भी किसी के विरुद्ध राणा के मन में सन्देह हो गया तो उसका दूर करना कठिन होगा। मैं तेरे हित की बात कहता हूँ। वह चित्तौड़ में एक आदमी भी ऐसा नहीं रखना चाहता जो मेवाड़ का शुभचिन्तक न हो।"

"मैं मन में डरा। चोर की डाढ़ी में तिनका। मैंने उसे स्पष्ट रूप से सब हाल कह दिया।"

जैमल हँसा—"मैं समझ गया था कि तेरी आँख लड़ गई है, मगर चम्पावती का बाप अभिमानी गहलौत है। वह कठिनता से अपनी लड़की देना तुझे पसन्द करेगा, क्योंकि ये लोग अच्छे घरानों में अपनी कन्याओं को ब्याहने के इच्छुक रहते हैं। फिर भी हानि नहीं। तू माननीय सिपाही है। मैं देखूँगा कि कहां तक इस मामले में तेरी सहायता कर सकता हूँ।"

"मैं अपने मन में दो कारणों से प्रसन्न हुआ। प्रथम जैमल ने अपने आप ही मेरी सहायता करने का वचन दिया। दूसरे जिस आशंका के कारण मुझे हर समय डर लगा रहता था, वह सम्पूर्णतया दूर होगया। और इसकी आड़ में मुझे अपनी कार्यवाही करने का उत्तम अवसर हाथ आने की आशा थी।"

"जैमल सच्चा आदमी था। वह चम्पावती के बाप से स्वयं ही मिला। बातचीत की और मुझे उसने सुनाया सम्भव है कि चम्पावती तुझे मिल जाय। मगर शर्त यह है कि तू अपने आपको उसके योग्य सिद्ध करदे। जब उसके बाप को विश्वास हो जायेगा कि तू वीर है और मेवाड़ पर प्राण निछावर करने के लिये तत्पर रहता है, तो वह खुशी से अपनी लड़की तेरे अर्पण कर देगा। इससे पहले इस बात का होना कठिन है। मैंने चम्पावती को राणा के महल में बुलाया है। वह रानियों के साथ रहेगी। क्या आश्चर्य कि कभी २ उसे देखने का सुअवसर प्राप्त

हुआ करे। वह भी पक्की राजपूतनी है। उसे भी तेरी स्त्री होने से इन्कार नहीं है, मगर बाप की तरह वह भी चाहती है कि जब तू अपने आपको मेवाड़ पर प्राण निछावर करने वाला सिपाही सिद्ध कर देगा, तो वह हर्ष पूर्वक तेरे साथ रहना स्वीकार कर लेगी।"

"मैं अपने हृदय में बड़ा प्रसन्न हुआ। वह लड़की महल की सहेली बनाई गई और मैं कभी २ उससे मिलने भी लगा। वह मुझे पसन्द करती थी मगर अत्यन्त चौकन्नी और हठीली थी फिर मुझे एक और लाभ हुआ कि महल के कुल समाचार उसकी ज़बानी मुझे मालूम होने लगे, जिनसे मुझे अपने काम में बड़ी भारी सहायता मिलने लगी।"

—❀—

❀ छटवाँ परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्ट जीवन का भ्रष्टता पूर्ण पत्र व्यवहार ॥

"जब मैं आगरे में था तो टोडरमल ने मुझे पत्र व्यवहार करने का एक विचित्र ढंग बताया था जिससे दो आदमी एक दूसरे को सरलता से अपनी परिस्थिति और विचारों से सूचित कर सकते थे और तीसरे को लेशमात्र भी सूचना होने की सम्भावना नहीं थी। अक्षरों के स्थान पर केवल हिन्दसों (अङ्कों) और सिफ़रों से काम लिया जाता था। इसका रचियता स्वयम् टोडर मल था। इसने विशेष २ आदमियों के साथ विशेष २ प्रकार के अक्षर मान रक्खे थे। इसके अनेक जासूस समस्त देशों में बहुतायत के साथ थे। बंगाल, उड़ीसा, दक्षिण, राजस्थान और काबुल तक सैकड़ों गुप्तचर नियत थे। मुझे चित्तौड़ में इसने इसी काम के लिये भेज रक्खा था।"

"जब मैंने राना की समस्त परिस्थितियों से परिचय प्राप्त कर लिया उसको हिन्दसों की शक्लों का एक पत्र लिखा और

अपने एक आदमी को आगरे भेजा। पत्र का विषय लगभग इस प्रकार था:—

'नवरात्रियों के दिन मेवाड़ में बहुत पवित्र समझे जाते हैं। विशेषकर राणा इनको अत्यन्त धार्मिक महत्व देता है। जो धार्मिक प्रथायें की जाती हैं उनके भली-भांति पालन होने को उसने अपने राजकाज की नींव समझ रक्खा है। मेवाड़ का राजवंश यकलिंग-नाथ योगी का सबसे अधिक श्रद्धालु है। यकलिंगनाथ ही ने बापा रावल को शासन कर्त्ता का पद प्रदान किया था।

वह जो कुछ रावल को आदेश कर गया था, उसके वंशज अक्षरशः उसका पालन करते हैं। नवरात्रि क्वार के महीने के दूसरे पखवारे के नौ दिन को कहते हैं। चित्तौड़ से मिला हुआ यकलिंगनाथ का मठ और मन्दिर है। उसमें इस पंथ के कई साधू रहते हैं, जो शिवजी के उपासक हैं। इनको साठ हज़ार की जागीर गुज़ारे के लिये मिली है। जब नवरात्रि के दिन आते हैं, मठ का महन्त एक साधू को राणा के पास भेज देता है। वह सोने चाँदी की बनी ताम जाम (पालकी) पर चढ़ कर आता है। उसे कई दिन तक लगातार तेज़ जुलाब दिया जाता है, ताकि पेट का मल बिल्कुल निकल जाय। खाना पीना नितांत बन्द रहता है। जब शुद्धि हो जाती है, नेज़े, भाले और तलवारों का एक मण्डप बनाया जाता है। साधू इस मंडप के नीचे आसन मार कर बैठता और नौ रात दिन तक एक ही आसन पर बैठा रहता है। न हर-कत करता है न पहलू बदलता है। मल मूत्र त्याग करने तक के लिये नहीं जाता। उसके चारों ओर पहरा रहता है, ताकि कोई आदमी उसके कार्य में विघ्न न करे और वह इस प्रकार बैठा हुआ अपने मन ही मन यकलिंगनाथ से प्रार्थना करता रहता है कि राणा का राज्य पीढ़ी दर पीढ़ी इसी प्रकार बना रहे। जब नौ दिन व्यतीत हो जाते हैं, राज के हथियार-भण्डार से एक पुरानी

मगर भारी तलवार निकाली जाती है, जो लगभग नौ फुट लम्बी व एक फुट चौड़ी है। उसकी पूजा की जाती है। यह इतनी भारी है कि दूसरे राजपूत सैनिक कठिनता से दोनों हाथों से उठा सकते हैं। हां, राणा एक ही हाथ से उठा लेता है क्योंकि यह समझा जाता है कि जब तक कि राणा इतना बलवान न होगा वह राज काज न कर सकेगा। यह तलवार हाथ में लेकर राणा घोड़े पर सवार होता है। इसके साथ मेवाड़ की सैना का जलूस रहता है। युद्ध के बाजे बजाये जाते हैं और राणा सब को लिये हुये हथियारों के मण्डप के पास जाता है। साधू की पूजा करता है। इसके शिष्य उसको फिर अन्तिम रस्म हो जाने पर ताम जाम पर बिठलाकर महल में ले जाते हैं। हीरे जवाहिरात थाल भर २ कर रक्खे जाते हैं। साधू इन सब में से एक २ मुट्ठी निकाल लेता है जो मठ के साधुओं के पास भेज दिये जाते हैं। राणा सैनिक जलूस को साथ लेकर समी के पेड़ के पास जाता है और घोड़े पर बैठा हुआ इसी खड्ग से पाढ़े की गरदन काट देता है। तब महल में वापिस आकर नवरात्रि की खुशी का उत्सव मनाता है। कर्मचारियों को सरोपा पोशाक तथा इनाम आदि बांटता है। यह प्रथा यहां पर प्रति वर्ष बड़ी धूमधाम से मनाई जाती है।"

"यदि नवरात्रियों के दिनों में चढ़ाई की जाय, और किसी प्रकार साधुओं के मठ पर क़ब्ज़ा प्राप्त कर लिया जाय, ताकि राणा अपनी प्राचीन रस्म या प्रथा को न कर सके, तो सम्भव है कि वह बलहीन हो जाय और पीढ़ी दर पीढ़ी से बैठा हुआ पुराना विश्वास उसको मुठभेड़ करने के अयोग्य बनादे"

"इस पत्र में मैंने और भी बहुत सी आवश्यक बातें लिखी थीं जिन से टोडरमल का जानकारी कराना आवश्यक था। मैंने न केवल राणा की सैनिक शक्ति तथा धन दौलत आदि के समाचारों से जानकारी कराई थी, बल्कि महल तक की तमाम बातें जो मैंने

चम्पावती से सुन रक्खी थी, पूरी तरह लिख दीं थीं। किसी को लेशमात्र भी सूचना नहीं थी कि मैं क्या कर रहा हूं। जैमल तो मेरी ओर से बिल्कुल बेसुध था। इसने समझ लिया था कि जिस राजपूत का विवाह गैहलौत वंश में होने वाला है वह किसी दशा में मेवाड़ का अनिष्ट चाहने वाला न हो सकेगा। मगर मुझे तो अकबर के दरबार में दूसरा टोडरमल बनना था और मुझे पूर्ण विश्वास था कि यदि मैंने मेवाड़ का क़ब्ज़ा अकबर को दिला दिया तो इस मामले में किसी को क्या संदेह हो सकता था कि मैं किसी मन्त्री के मरने पर इसके दरबार का नवरत्न बनाया जाऊँगा। मैं उत्साही हृदय का क्षत्री था और दुनियावी हैसियत की दृष्टि से राजपूतों में नामी पद प्राप्त करना चाहता था।"

—:o:—

सातवाँ परिच्छेद

॥ भ्रष्ट जीवन के भ्रष्टाचार पूर्ण पत्र व्यवहार का फल ॥

"वर्षा ऋतु अभी समाप्त होने पर नहीं आई थी, कि अकबर बहुत सी सेना लेकर राजस्थान आकर धर धमका। मारवाड़ आदि में से किसी ने भी इसका विरोध नहीं किया। अम्बर नरेश तो अपनी लड़की देकर अकबर का ससुर हो गया था और इसका पुत्र मुसलमान का साला बन गया था, इससे कब आशा हो सकती थी कि वह इसकी सैना को राजस्थान के अन्दर प्रवेश करने से रोकते। इस लज्जास्पद नाते के कारण से वह राजपूतों में अपमानित और अप्रतिष्ठित समझे जाते थे। दूसरे रईस या तो कमज़ोर थे या व्यर्थ में शक्तिशाली शत्रु के छेड़ने से बचना चाहते थे।

"नवरात्रियों से पहिले ही अकबर की सैना चित्तौड़ पर आगई। दूसरे दिन अकबर का दूत राणा के दरबार में आया और अबुलफ़ज़ल का लिखा हुआ अकबर का पत्र दिया, जिसमें

लिखा हुआ था—'राणा ने अकारण ही बाजबहादुर गुजरात के शासक से युद्ध के समय हमारा विरोध किया था। शाही सैना इसका बदला लेने आई है। या तो सुलह कीजिये अथवा युद्ध के मैदान में उतर आइये।" राणा लड़ने को तैयार नहीं था। इसने कुछ देर के पश्चात् कहा—'पत्र का उत्तर चार दिन बाद दिया जायगा। यह उसकी आदत थी। दूत तो वापिस चला गया। राणा ने रात्रि के समय मंत्रियों को बुलाया। वे आये और लड़ाई या सुलह के मामले पर वाद विवाद करने लगे। यद्यपि मैं राज मन्त्री नहीं था परन्तु अचानक की बात थी कि मैं जैमल के साथ उस समय दरबार में मौजूद था।"

राणा ने कहा—" शत्रु बलशाली है। हमारे पास युद्ध का सामान नहीं हैं।"

बिदनूर के राजा जैमल ने जो सैना का सिपहसालार था, कहा—"हमारा क़िला मजबूत है। इसके चारों ओर पहाड़ियां हैं। खाने पीने की सामिग्री बहुतायत से है। क़िले के अन्दर पहाड़ी तालाब सूखने वाले नहीं हैं। प्रथम तो हमको अन्न आदि की ओर से कमी नहीं है, दूसरे रसद पहुँचाने का प्रबन्ध सुरंगों की राह से भली प्रकार होता जायगा। शत्रु को इन सुरंगों का पता नहीं है। हम क़िले के अन्दर रह कर इससे मुठभेड़ कर सकेंगे। वह यहाँ अधिक दिनों तक नहीं ठहर सकता। एक आध वर्ष में थकथका कर चला जायगा।"

स्पोकैलवा के सोलह वर्षीय रईस ने ज़बान खोली–"हम वीर हैं, प्राण देने वाले हैं, राजपूत हैं, क्षत्री हैं। क़िले में घिर कर लड़ने की आवश्यकता कब है। अकबर हमारा सामना न कर सकेगा।"

राणा ने उत्तर दिया–"वीर ! तू नहीं जानता। अकबर मामूली आदमी नहीं है। बिना सोचे समझे वह काम नहीं करता।

इसने अच्छी तरह हमारी स्थिति का अनुमान लगा लिया है और ऐसे तजुर्बेकार शत्रु का मुक़ाबिला आसान नहीं होता।"

उदैसिंह की एक अनब्याही रानी दरबार में मौजूद थी। केवल यही एक स्त्री थी जो इसके मिज़ाज पर हावी थी। राणा तो प्रायः सुख चैन में लिप्त रहता था। यह बड़ी योग्यता के साथ राज काज के सब मामलों में हस्तक्षेप किया करती थी। मैंने टोडरमल को इसका वृतान्त लिख दिया था। यह न केवल रूपवती थी बल्कि अत्यन्त वीर भी थी। इसके सामने किसी दीवान या मंत्री की नहीं चलती थी और न किसी की दाल गलती थी।

रानी ने कहा—"मर्दो! तुम स्त्रियों के वस्त्र पहन कर घर में क्यों नहीं बैठते! मैं शत्रु से अकेली मुठभेड़ करूंगी। तुम जानते हो मुझ में साहस है। युद्ध से जी चुराना राजपूत का काम नहीं है। मुझे सैना को अपने हाथ में लेने दो। और मैं अपनी वीरता का तुमको तमाशा दिखाऊँगी। यह कभी न समझो कि केवल राजपूतों ही को लड़ना आता है। राजपूतनियां भी इस विद्या में निपुणता दिखा सकती हैं। हां, अवसर प्राप्त होने की देर है।"

"इस स्त्री की बातों में जादू था। उदैसिंह लज्जित हुआ। मन्त्रीगण प्रभावित हुए। अन्त में सलाह ठहरी कि शत्रु से सुलह करना मेवाड़ को लज्जित करना है। हां, अन्य प्रकार से इससे लड़ने के लिये तैयारी करनी चाहिये।"

जैमल ने फिर कहा—"सिवाय घिर कर लड़ने के और कोई उपाय मेरी समझ में नहीं आता। दूबदू लड़ने की राय तो मैं कभी न दूँगा। इसमें भय है। कौन जाने किस करवट ऊँट बैठे। यदि क़िले को बन्द कर दिया जाय तो मैं हर प्रकार से अकबर के विरुद्ध काम करता रहूंगा और बिना प्राण दिये युद्ध से अलग न हूँगा।"

रानी बोली–"जैमल जी अनुभवी पुरुष हैं। इनके अ
भव से लाभ न उठाना ग़लती होगी। युद्ध में कर, बल, छल सब ही प्रकार के कार्य किये जाते हैं। जैमल तो क़िले में रह कर सेना से काम लें। मैं बाहर निकल कर हिकमत अमली से दुशमन का काम तमाम करने का प्रयत्न करूँगी।"

"मगर इसने यह नहीं बताया कि यह काम किस प्रकार किया जायगा। इसकी जानकारी मुझे बाद में हुई।"

चार दिन परस्पर सलाह और मशवरे में व्यतीत होगये।

"मैंने सुना कि रानी* भेष बदल कर गवैया के रूप में अकबर के डेरे में पहुंची। अकबर ने इसका गाना सुना, प्रसन्न हुआ। जब इसने बहाने बहाने अकबर को खंजर का निशाना बनाना चाहा, अकबर ने इसका हाथ पकड़ लिया। रानी! मैं तुझे जानता हूँ, मैं अचेत नहीं हूँ। तेरा दाव मुझ पर कभी न चल सकेगा और आदर मान के साथ उसे क़िले में भेज दिया। रानी ने आकर उदैसिंह को सूचना दी कि अकबर केवल बहादुर और बुद्धिमान ही नहीं है बल्कि वह अत्यन्त सज्जन भी है। इसकी बुद्धि और साहस से इतना खटका नहीं है जितना कि इसकी सज्जनता और सद्व्यवहार से है। ऐसे शत्रु पर विजय पाना वास्तव में महा कठिन है।"

"जब क़िले के राजपूतों को यह हाल मालूम हुआ तो रानी को बड़ी चतुराई से क़त्ल कर दिया गया क्योंकि वह इसको शर्मनाक कृत्य समझते थे। उदैसिंह में स्वार्थ परता थी। इसने जान बूझकर इनकी धृष्टता को टालटूल कर दिया कि मानो रानी

* विभिन्न लेखकों ने रानी की इस असामान्य घटना को विभिन्न रूप से वर्णन किया है। कुछ कहते हैं कि रानी ने तीन मर्तवा अकबर पर वार करना चाहा। तीनों बार वह असफल रही और अकबर ने इसके प्राण लेने के बदले पालकी में बिठाकर सम्मान पूर्वक क़िले की ओर भेज दिया।

के क़त्ल की घटना की उसे सूचना ही नहीं थी। जैमल ने चौथे दिन उत्तर में मुग़ल बादशाह को स्पष्ट रूप से कहला भेजा कि सुलह का होना असम्भव है। राजपूत नहीं चाहते कि सुलह की जाय। दोनों पक्ष लड़ाई की तैयारियाँ करने लगे।"

❀ आठवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्टता पूर्ण सम्मति ॥

"राजपूतों का उत्तर प्राप्त होते ही अकबर ने युद्ध की घोषणा कर दी। सबसे पहिले इसकी सैना ने साधुओं के मठ पर घेरा डाल दिया। जो क़िले से कुछ दूरी पर था मगर इनके साथ किसी प्रकार की छेड़छाड़ नहीं की गई। अकबर दूरदर्शी शासक था। जानता था कि साधुओं की एक बड़ी संख्या इस देश में दबे हुये रोग की तरह है इनसे न परलोक का काम होता है और न लोक का। जब तक छेड़छाड़ नहीं की जाती यह दबे दबाये पड़े रहते हैं। जहां छेड़ दिये गये फिर इनमें नया जीवन आने का भय रहता है। उसे इस बात का अनुभव हो चुका था। इसने चित्तौड़ आने से पहिले दाऊद साहब नामी एक प्रसिद्ध साधू को बड़ी चतुरता से अपने यहां आगरे में नज़र बन्द कर रक्खा था। इसकी इच्छा थी कि दाऊद जी उसे नबी स्वीकार करलें और "दीन इलाही" में सहायक बनें जिसका प्रवर्तक (चलाने वाला) वह स्वयम् था। मगर दाऊद जी को इसका यह कृत्य अच्छा नहीं लगा। क़ैद से निकल भागे और अम्बर में आकर नागा शिष्यों की सैना तैयार की और अम्बर की रक्षा इनके सुपुर्द की। यह अनुभव काफ़ी था। यकलिंग नाथ का मठ घेर लिया गया। मगर यह आदेश था कि कोई सैनिक साधुओं को तङ्ग न करे। केवल इतनी सावधानी रहे कि इनमें से कोई

चित्तौड़ के क़िले में न जाने पावे ताकि राणा नवरात्रि की पूजा न कर सके।"

"अकबर ने ३३ फुट ऊँचा टीला बनाया और वहाँ रह करके क़िले की देख भाल प्रारम्भ की। एक बारगी चढ़ाई करके क़िले पर विजय पाने की उसे आशा न थी, क्योंकि इस प्रकार काम करने में राजपूत ऊँचे से पत्थर लुढ़का कर इसकी सैना को सरलता से कुचल सकते थे। वह तोपों से क़िले को नष्ट भ्रष्ट करना चाहता था।"

"कई दिन गोला बारी हुई, मगर इसका परिणाम कुछ नहीं निकला। यदि गोलों की मार से कहीं कहीं परकोटे की दीवारों को हानि हो जाती थी, तो राणा की आज्ञा से उसी समय मरम्मत कर ली जाती थी। वह आप परकोटे पर घूमता रहता था और राजपूतों का उत्साह बढ़ाता था। राजपूतों के दिल में यह बात बैठ गई थी कि क़िले पर विजय पाना असम्भव है और वह धैर्य पूर्वक अपने काम में व्यस्त रहते थे।"

"मैंने यह दशा देखी। मैं नहीं चाहता था कि क़िले के नष्ट होने में देर लगे लेकिन कठिनता यह थी कि मैं शाही सैना से दूर था और इसके कमज़ोर पहलू से अकबर को जानकारी नहीं करा सकता था। मैंने संकल्प किया कि बाहर निकल कर बादशाह से मिलना चाहिये। इसी विचार से मैंने एक दिन चंपावती से भेंट की। वह मिली मन में प्रसन्न थी। मुझसे कहने लगी—'राजपूत! अब अपनी शूर वीरता दिखाने का तुझे अच्छा अवसर मिला है। इस परीक्षा में पूरा उतरने का प्रयत्न कर और मैं तेरी सेविका होकर रहूंगी।"

"चम्पावती रूपवती तो पहिले ही से थी मगर युद्ध की घोषणा ने इसे और भी सुन्दर बना दिया था। राजपूती भावनायें

उबाल ले रही थीं। इसके चहरे की आकृति अधिक उभर खड़ी हुई थी। मैं और भी इस पर मोहित होगया।"

मैंने कहा—"सुन्दरी ! अकबर अत्यन्त शक्तिवान बादशाह है। इससे मुठभेड़ करना और मुठभेड़ करके इस पर विजय पाना सुख चैन से रहने वाले उदैसिंह का काम नहीं है।"

चम्पावती की त्यौरी बदल गई। "क्या तुमने मुझे ऐसी ही बातें सुनाने के लिये बुलाया है। मैं राणा की बुराई नहीं सुन सकती। वह हिन्दूपति है और हमारा क़ौमी सरदार है।"

मैंने कहा—"यह सब सच है मगर मुठभेड़ कठिन है।"

चम्पावती बोली—"कठिन हो या सरल, इनमें से किसी की ओर हमारा ध्यान नहीं है। हमको तो इस समय अपनी असलियत दिखाना स्वीकार है। इसके सिवाय मैं और किसी बात को सुनना नहीं चाहती।"

मैं बोला—"सुन्दरी ! जीवन ईश्वर की सर्व श्रेष्ठ दात है। यह हमको इसलिये प्रदान नहीं किया गया कि व्यर्थ में उसे नष्ट भ्रष्ट किया जाय।"

चम्पावती की आँखें ऊपर चढ़ गईं। "तुम फिर क्या चाहते हो ?" मैंने उत्तर दिया—"मेरी इच्छा है कि तुझे इस भय के स्थान से बाहर निकाल ले जाऊँ ताकि इस गोला बारी में तू मृत्यु से बची रहे।"

चम्पावती का हाथ तलवार की मूँठ पर पहुँचा। "नीच राजपूत ! जा मेरी आंखों के सामने से दूर होजा। मैं समझ गई कि तू साहस और वीरता रहित है। मेरी आशा त्याग दे। मैं जीते जी तेरा साथ न दूँगी। यह मेरा अन्तिम निर्णय है। मैं अपने राणा और रानियों के साथ मर मिटूँगी। जा ! अब मुझे कभी अपनी सूरत न दिखा। तू शक्तिहीन डरपोक और कायर

है। राजपूतिनी ऐसे मलिन हृदय वाले मनुष्य को कभी पसन्द नहीं करतीं।"

"मैं कांप उठा। कुछ अधिक कहना चाहता था मगर चम्पावती तलवार हाथ में लिये हुये महल की ओर तेज़ी से दौड़ गई और मेरी आशा निराशा में परिणित होगई। मैं अपनी जाति की स्त्रियों को जानता हूं। इनका हठ बुरा होता है। यह जहां अड़ जाती हैं फिर जान देकर हटती हैं। अब चम्पावती का हाथ आना कठिन होगया। अच्छा यह हुआ कि किसी की दृष्टि इस पर नहीं पड़ी वर्ना मेरी दुर्दशा में क्या संदेह था। फिर भी मैं मन में डरा कि कहीं चम्पावती रानियों से जाकर यह वृतान्त न कहदे, वर्ना लेने के देने पड़ जाँयेंगे।"

रात हो गई। मैं बहाने बनाता हुआ क़िले से बाहर आया, और अकबर के डेरे की ओर बढ़ा। पहिरे वाले सिपाहियों ने पूछा-"कौन है?" मैंने कहा-"मित्र हूँ।" वह बोले-"रात के समय शत्रु मित्र की पहँचान नहीं की जासकती। हथियार डाल दो।" मैंने ऐसा ही किया। सिपाही मुझे गिरफ़्तार करके सिपहसालार के डेरे में ले गये। इसने मशाल के प्रकाश में मुझे सर से पांव तक देखा। मैंने अपना नाम बताया। इसने रक्षा की दृष्टि से मेरे हथियार जो कमर से लटक रहे थे, एक २ करके उतरवा लिये। इस तरह दुर्व्यवहार करने के बाद मुझे अकबर के डेरे में पहुँचाया। अकबर रात दिन में केवल तीन घण्टे सोता था और कभी २ तो रात दिन जागता रहता था। इसने मुझे पहिंचान लिया। बादशाह की पहिंचान बड़ी अच्छी थी। जिसको एक बार एक दृष्टि से देख लेता था फिर सारी उम्र सूरत नहीं भूलता था।

अकबर ने पूछा-"राजपूत! तू किस नीयत से आया है।"

मैं अपने मन में लज्जित हुआ। कहा-"केवल शाही सेवा

की दृष्टि से। क्या जहांपनाह ! मुझे भूल गये। मैं वही व्यक्ति हूँ जिसे टोडरमल ने चित्तौड़ गढ़ में भेजा था।"

अकबर ने पूछा–"तू क्या सहायता कर सकता है ?"

मैंने अर्ज़ किया–"इस तरह आप महीनों गोले बरसाते रहेंगे और क़िला नष्ट न होगा और न राजपूत वश में आवेंगे।"

अकबर बोला–"मैं यह जानता हूँ। तू अपनी राय बता कि अब क्या करना चाहिये।"

मैंने उत्तर दिया–" यद्यपि क़िला मज़बूत अवश्य है, मगर वह कमज़ोरी से ख़ाली नहीं है। मैं ऐसे स्थान बता सकता हूँ कि जहां सरलता से सुरंग लगाई जाय। बारूद के धमाके से वहां की दीवारें फट जांयगी। इनकी मरम्मत फिर कठिन हो जायगी और शाही सैना क़िले में घुस सकेगी। दूसरे मैं हर एक आदमी को पहँचानता हूँ। राजपूत अनसमझ हैं। क़िले की चोटी पर कन्डील लटका रक्खी है जिसका प्रकाश दूर२ तक पहुंचता है। इस प्रकाश में यदि तीर चलाया जाय तो सम्भव है कि विशेष २ व्यक्ति मारे जांय। फिर राणा की सैना स्वयं कमज़ोर हो जायगी। चार दीवारी पर उदैसिंह, जैमल और पुत्तू आदि घूम फिर कर मरम्मत कराते रहते हैं। मैं इनको सरलता से बता सकता हूं।"

अकबर हँसा–"तू राजपूत है ?"

'इसके इन शब्दों में धिक्कार का लहजा भरा था। मैं लज्जित हो गया। अकबर ने मेरी सूरत देखी और बात को टाल गया।"

अकबर ने कहा–"बहुत अच्छा ! तेरी राय अच्छी प्रतीत होती है। मगर शर्त यह है कि तेरे पास कोई शस्त्र न रहे। मैं राजपूतों का इतना विश्वास नहीं करता।"

मैं फिर शरमाया। सिपहसालार ने पहिले ही मेरे सब हथियार रखवा लिये हैं। "अफ़सोस ! यह अपमान असहनीय

था। मैं तो यह समझ कर आया था कि अकबर मेरा सम्मान करेगा मगर मामला इसके विरुद्ध उल्टा हुआ जाता है। उसे तो मेरा विश्वास तक नहीं है। बादशाह गम्भीरता और सहनशक्ति के लिये प्रसिद्ध था। मैंने उसे चित्तौड़ के तमाम कच्चे चिट्ठे पहुँचा दिये थे मगर वह अपने स्वभाव के प्रतिकूल इस समय मुझे बेएतबार समझ रहा था। सचमुच यह बड़े भारी अपमान और पछतावे की बात थी। मगर इसने मुझे अधिक सोचने का अवसर नहीं दिया।"

अकबर ने पूछा–"क्या किले में एकलिंगनाथ की पूजा का कुछ प्रबन्ध हुआ है ?"

मैंने उत्तर दिया–'हां, आप के आते ही राणा ने एक साधू मठ से बुला लिया था। तलवारों का मण्डप सुसज्जित है। उसके नीचे एक साधू बैठा हुआ अपना जप तप कर रहा है। दशहरा के उत्सव में अभी कई दिन बाक़ी हैं।"

अकबर ने फिर पूछा–"तूने इसकी सूचना क्यों नहीं दी ? साधू को वहां जाने से रोक लिया जाता।"

मैंने कहा–"यह बात मेरे अधिकार से बाहर थी।"

अकबर ने किले के कमजोर पहलू के सम्बन्ध में फिर बहुत सी बातें पूछीं और जब बहुत कुछ पूछ चुका, मुझे आराम करने के लिये अवकाश दिया। इधर मुझे एक डेरे में ठहराया गया। उधर अकबर ने अपने सरदारों को बुलाया। मेरे डेरे के चारों ओर पहरे वाले बिठा दिये गये। मैं समझ गया कि बादशाह को मेरा क़तई विश्वास नहीं है। अब अकबर की सेना से बाहर जाना मेरे लिये असम्भव है। यह मेरी सेवाओं का पारितोषिक था।

—❀०❀—

* नवां परिच्छेद *

॥ भ्रष्ट सम्मति के अनुसार व्यवहार ॥

"सवेरा हुआ। एक ओर क़िले पर गोलों की बौछार आरम्भ कर दी गई। दूसरी ओर अकबर के बेलदार स्थान २ पर मेरी राय के अनुसार सुरंगें खोदने में लगे और अकबर की फ़ौज क़िले के पास पहुँच गई। क़िले वाले बन्दूक और तोपें चलाने के अतिरिक्त ऊपर से भारी पत्थर ढलका दिया करते थे जिससे मुग़ल बादशाह के वीर सैनिक कुचल २ कर मरते थे मगर इनका पग पीछे नहीं हटता था। उधर भी राजपूत सैकड़ों की संख्या में मरते थे। दोनों ओर मृतकों का ढेर लग रहा था। थोड़ी देर में इसी दिन एक जगह सुरंग उड़ाई गई। क़िले की दीवार अड़ अड़ अड़ा धम करती हुई नीचे आगई। फिर तो राजपूत और मुग़ल एक साथ मिले। खींचा तान मार काट का क्रम चलने लगा। सेना के लोगों का दम घुटने लगा। सरदार चन्दावत, जो क़िले के फाटक पर नियत था, मारा गया। पुत्तू ने इस का स्थान ग्रहण किया। मैं शाही सैना के साथ रहकर लड़ाकुओं का तमाशा देखता रहा। पुत्तू की आयु केवल सोलह वर्ष की थी। इसकी कम आयु वाली स्त्री और अधेड़ माता जिरह बख्तर पहिने हुये उसकी सहायक थीं। दोनों के हाथों में बर्छे भाले थे। यह शेरनियां जिधर पिलती थीं, दम के दम में क़तार की क़तार साफ़ कर देती थीं। मैंने कहा-"यह पुत्तू की मां और स्त्री हैं।" बादशाह ने कुछ ध्यान नहीं दिया। अभिप्राय यह कि युद्ध में स्त्री पुरुष सब ही सम्मिलित थे। स्त्रियों के सम्मिलित रहने से पुरुष और भी भयानक हो गये थे। वह जान पर खेल रहे थे। यकायक मेरी दृष्टि एक ज़िरहपोश पर गई। मैं उसे देखकर सहम गया। यह मेरी मँगैती चम्पावती थी। मैं लज्जा के मारे बादशाह के पीछे आगया। इसने एक दृष्टि से मुझे देखा, फिर लड़ने वालों को

उत्साहित करने लगा। युद्ध क्या था। प्रलय का दृश्य था। मुग़ल और राजपूत दोनों जान दे रहे थे। संध्या तक युद्ध बराबर होता रहा। बादशाह क़िले पर विजय न पासका। अपने डेरे में वापिस आया। उधर राजपूत भी दीवार की मरम्मत में लग गये। इसदिन कितने लोग काल के गाल हुये इसका पता लगाना कठिन था।"

"रात हो गई। अकबर ने मुझे बुला भेजा। मैं उपस्थित हुआ।"

अकबर ने पूछा-"लड़ाई के समय मेरे पीछे क्यों चला आया था।"

"मैं इस प्रश्न से बड़ा लज्जित हुआ। 'काटो तो लहू नहीं बदन में' मुँह का रंग पीला पड़ गया। अकबर ने मेरी सूरत देखी, मगर मेरे उत्तर की प्रतीक्षा में एक दो क्षण चुप रहा। उत्तर देना आवश्यक था। चुप रहना भय से ख़ाली नहीं था।"

मैंने कहा-"जहांपनाह! पुत्तू की माँ और स्त्री के साथ मेरी मंगैती चम्पावती भी थी। जब इसकी सूरत की ओर दृष्टि पड़ी, मुझे लज्जा मालूम हुई। यह कारण मेरे पीछे हटने का था।"

अकबर मुस्कराया-"तू उसे भी अपने साथ क्यों नहीं लाया।" मैंने निवेदन किया-"आँतरिक इच्छा तो यही थी। और मैंने कल इसे कहा भी था मगर उसने स्वीकार नहीं किया। मुझे बुरा भला कहा और मेरी कमज़ोरी पर मुझे धिक्कारा।"

अकबर बोला—"आश्चर्य की बात है कि पति तो बादशाह की सेवा का दम भरे और स्त्री शत्रुता पर तुली रहे। ऐसा न कभी कानों सुना न आंखों देखा।"

मैं बोला-"राजपूतिनियां इसी प्रकार की होती हैं।"

अकबर ने पूछा-"क्या वह जानती थी कि तू शाही सेवा में है?"

मैंने उत्तर दिया—"नहीं! यदि इसे यह ज्ञात होता, तो

अपने हाथ से मुझे उसी क्षण क़त्ल कर देती। वह अनभिज्ञ है। विवाह भी इसी शर्त पर ठहरा था कि मैं अपने आपको शूरवीर सिद्ध करूँ।"

अकबर ने कहा-"चूँकि तूने अपनी भावनाओं का बलिदान किया है, इसका इनाम भी तुझे बहुत अधिक दिया जायगा।"

"थोड़ी देर विश्राम करने के बाद अकबर टीले पर चढ़ा। छत पर बैठ कर राजपूतों के दीवार की मरम्मत का तमाशा देखने लगा। मैं भी उसके साथ बैठा हुआ था। एक व्यक्ति सबसे अधिक चार दीवारी पर चक्कर लगाते हुये दृष्टिगोचर हुआ।"

अकबर ने पूछा—"यह सबसे अधिक मुस्तैद आदमी कौन है?" मैंने उत्तर दिया-"यही जैमल है, जो विदनूर का राजा है और इस समय राणा की सेना का सिपहसालार है।"

"जैसे चीता टकटकी बांधकर अपने शिकार को देखता है, इसी प्रकार अकबर ने ध्यान पूर्वक अपनी दृष्टि जैमल पर जमाई, बन्दूक हाथ में ली, निशान जमाकर बन्दूक चलादी और जैमल गिर कर कर उसी जगह ठंडा हो गया। मेरे मुँह से निकल गया-'अब क़िले की बिजय में कोई शंका नहीं रही। जैमल मेवाड़ की जान था। उदैसिंह आराम तलब है इसमें इस लड़ाई के जारी रखने का साहस नहीं है। ऐसा अनुभव है कि वह रात ही को क़िला छोड़ कर भाग जायगा।'

अकबर ने पूछा-"क्या वह किसी प्रकार पकड़ा नहीं जा सकता।"

मैंने निवेदन किया-"कठिन बात है। क़िले में कई सुरंगें हैं। मालूम नहीं वह किस सुरंग से भाग निकले।"

अकबर चुप हो गया और मुझे अपने निवास स्थान पर जाने की आज्ञा देदी।

—❀—

❀ दसवाँ परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्ट आचरण का भ्रष्ट परिणाम ॥

"जैमल के मरते ही राजपूतों का साहस टूट गया। मुझे बाद में मालूम हुआ कि उसी रात्रि को समस्त राजपूत और राज पूतिनियां मरने मारने के लिये तत्पर हो गये। स्त्रियों में सन्नाटा छागया था। वह समझ गये थे कि अब चित्तौड़ की कुशल नहीं है। उदैसिंह ने सब को महल में बुलाया। क़िले की मरम्मत का कार्य बिल्कुल बन्द नहीं हुआ था। सब लोगों ने राणा को चित्तौड़ छोड़कर चले जाने की सलाह दी। वहतो इसी प्रतीक्षा में था। वह दक्षिणी सुरंग के मार्ग से चला गया। स्त्रियों और पुरुषों ने विश्राम नहीं किया। ऐसे समय में किसको विश्राम की सूझती है। सबने अन्तिम पान खाया। मुग़लों ने मुझ से कहा था कि इस रात क़िले से प्रकाश कभी २ आता था। कभी ऊँचा चला जाता था और कभी नीचे दब जाता था। मैं समझ गया कि वह मशालों की रोशनी रही होगी।"

"दूसरे दिन प्रातःकाल कई सुरंगें उड़ाई गईं। कई जगह की दीवार फट गई और क़िला अब बेकार हो गया। फाटक की दीवार पहिले ही खुल गई थी। रात्रि को उसकी मरम्मत न हो सकी। मुग़लों ने इसी ओर से आक्रमण किया। अकबर ने संकराम नामी अपनी विख्यात तोप के चलाने का आदेश दिया। जब इसकी रोशनी भभक २ कर निकलती थी, वह खुशी से उछल पड़ता था। इसे विश्वास होगया था कि आज राजस्थान के सबसे अधिक अभिमानी राजा का सिर नीचा किया जायगा। उसका यह विचार सच था।"

"इधर मुग़ल फाटक पर पहुंचे, उधर केसरिया बाना पहिने हुये राजपूतों ने निडरता से द्वार खोल दिया। जिस प्रकार नदियां

समुद्र से मिलती हुई शोर मचाती हैं इसी प्रकार मारो मारो की ध्वनि प्रचंड हुई। राजपूत मरने पर तुले हुये थे। मुग़ल चित्तौड़ पर अधिकार जमाने को लालायित थे। दोनों के भाव एक ही प्रकार के थे। राजपूतों में साहस अधिक था। मुग़लों को पीछे हटा दिया। यह पीछे हट आये। फिर लहू लहान का वह भयानक दृश्य आँखों के सामने आया जिस का वर्णन वाणी की शक्ति से बाहर है। लोगों की उमड़ती हुई बाढ़ क़िले के बाहर आई, जो शत्रुओं को अपने अन्दर डुबोना चाहती थी। तलवारें शपा शप चलने लगीं। लोगों के सिर कट कट कर गेंदों की तरह ऊपर की ओर उछलते थे। हाथ पाँवों की कुछ न पूछो। जिस तरह वर्षा ऋतु की नदियों की बाढ़ अपने किनारे के वृक्षों को गिराती रहती हैं, उसी प्रकार यह लोगों की बाढ़ मुग़लों के पैर उखेड़ने लगी। किस की शक्ति थी कि इसका सामना करता। क़िले से उमड़ उमड़ कर राजपूत बाहर चले आरहे थे और मुग़लों को हर समय इन के कारण पीछे हटना पड़ता था। मैं बादशाह के साथ यह दृश्य देख रहा था। इसकी ज़बान से निकल गया–"क्या अच्छा होता कि इन राजपूतों की सेना मुझे मिल जाती, तो मैं भी सिकंदर की तरह दुनियाँ का दूसरा विजेता प्रसिद्ध होता"।

राजपूतों की संख्या थोड़ी थी। जैमल ने चाहा था कि आसपास के युवक राजपूतों को बहुतायत से सैना में भरती करे मगर इसको इतना अवसर नहीं मिला। ईश्वर को मंजूर था कि चित्तौड़ सदा के लिये नष्ट कर दिया जाय और उसकी उन्नति अवनति में परिवर्तित हो जाय। लड़के, युवक, बूढ़े सब एक २ कर के कट मरे। अकबर की इच्छा थी कि यदि वह मिल जांय तो उनको क्षमा प्रदान कर दी जाय। मगर यह तो घर से सौगन्ध खाकर चले थे कि मरते २ मर जायेंगे मगर क्षमा का शब्द जिभ्या पर न आयेगा। उन्होंने अपने प्रण को सच्चा कर दिखाया। 'प्राण

जांय पर बचन न जाई।' समस्त राजपूत मर गये, एक जीवित नहीं बचा, राजपूत स्त्रियां चार दीवारी पर से इस खू... दृश्य को देख रही थीं। अकबर की आज्ञा थी कि अब दीवार पर तोपें न चलाई जांय क्योंकि इसमें इन स्त्रियों की हत्या होने का भय था। इस आज्ञा की अक्षरशः पाबन्दी की गई। अकबर की सेना के अनगिनत सिपाही राजपूतों के हाथ से मारे गये।

"जब पुरुष वर्ग के राजपूत इस तरह समाप्त हो गये, दीवार की स्त्रियां क्षण भर में दृष्टि से ओझल हो गईं। बादशाह का ख्याल था कि वे डर के कारण भाग गई होंगी मगर राजपूतिनियां और भय! इसकी आशा किसे हो सकती थी! थोड़ी देर के बाद क़िले के अन्दर तड़ाके की आवाज़ पैदा हुई। आकाश धुँआ धार बन गया। आग की लौ ऊँची पहुंची जिसका रुख़ आकाश की ओर था।"

अकबर ने पूछा—"यह क्या हुआ?"

मैंने उत्तर दिया—"हुजूर! स्त्रियों ने 'जौहर' किया है। जिस प्रकार राजपूत युद्ध स्थल में कटकर मरे, इसी प्रकार राजपूत स्त्रियों ने पहिले तो पृथ्वी के नीचे सुरङ्ग बनवाई और फिर उसके ऊपर चितायें बनाकर बैठ गईं और जलकर भस्म हो गईं। अब संसार में इनका कोई नाम व निशान बाक़ी नहीं रहा।

—❀:०:❀—

❀ ग्यारहवां परिच्छेद ❀

❀ दहलाने वाला दृश्य ❀

"नवरात्रि का त्यौहार नहीं मनाया गया, न साधू जप तप कर सका। न दशहरा के उत्सव का जुलूस निकल सका। राणा भाग गया। चूँकि बापा रावल की प्रचलित की हुई प्रथा की पाबन्दी में गड़बड़ी हुई मेवाड़ी उसी समय से चित्तौड़ को संदेह की दृष्टि से देखने लगे और यह प्रण कर लिया कि भविष्य में

चित्तौड़ से राजधानी की पदवी छीन ली जाय। उदैसिंह ने दूसरी जगह पहाड़ी पर एक नगर बसाया। इसका नाम उदैपुर रक्खा और वही राणा का निवास स्थान नियत किया गया।"

"अकबर ने दशहरा❀ के दिन चित्तौड़ के गढ़ में प्रवेश किया। वह रक्त पात वाली ज़मीन पर पांव जमाता हुआ गया। मगर अब वहां क्या था! द्वार और दीवार टूटी फूटी! महल उजाड़! स्थान २ पर हड्डियों के ढेर। खज़ाना खाली! इसमें एक कौड़ी तक नहीं थी। उसे ऊजड़ नगर क्यों न कहा जाय। सन्नाटा छाया हुआ था। न आदमी न आदमी का बच्चा! पशु तक इसमें नहीं रहे थे। यह नगर किसी समय दुलहिन की तरह सुसज्जित था मगर अब वह दुलहिन बेवा हो गई थी, जिसके चेहरे पर रौनक़ का नाम तक नहीं रहा था। गली कूचों में क्वार मास में भी धूल उड़ रही थी।"

"अकबर ने तमाम गढ़ को देखा। मंदिरों तक की सैर की। पता नहीं कितनी शताब्दियों में यह इस प्रकार बसाया गया था। स्वयं पहाड़ी पर विस्तृत और सुन्दर ताल बने हुये थे। जल की कमी नहीं थी। जहां जल होता है, जीवन भी वहां ही रहता है। उदैसिंह सुख चैन का इच्छुक था उसने स्थान स्थान पर तालों के किनारे और मध्य में केल किलोल करने के स्थान बनवाये थे। बाग़ कई एक थे जिनमें न केवल पुष्पों के वृक्ष बहुतायत से थे, बल्कि फल देने वाले वृक्ष इनसे भी कहीं अधिक थे। मगर अब क्या था! श्मशान! उजाड़! चारों ओर भय आतंक छा रहा था। यह श्मशान भूमि बन गया था। मुर्दों की खोपड़ियां इधर उधर पड़ी

❀ कुछ इतिहासकार कहते हैं कि अकबर ने मई १५६७ ई. में चित्तौड़ में प्रवेश किया था। यह ग़लत है। मई में दशहरा नहीं मनाया जाता। मई का दशहरा दूसरा है।

हुई ! हाथ पांवों के ढेर लगे हुये ! हर जगह चील और गिद्ध मंडला रहे थे। मानो राणा की सम्पत्ति का असली उत्तराधिकार इन्हीं को मिला है।"

अकबर मेरी ओर फिर कर बोला—"राजपूत ! तूने शाही सेवा की है। इनाम का अधिकारी है। तुझे इसके उपलक्ष में क्या दूँ।"

मैंने सिर झुका कर धन्यवाद दिया। "आपकी दया दृष्टि चाहिये।"

अकबर ने कहा—"तेरे साथी कहां हैं ?"

मैंने कहा-"वह गढ़ में रह गये थे। सब लड़ लड़ाकर मर गये। मेरा अनुमान है कि इनमें से एक भी जीवित नहीं रहा।"

अकबर हँसा—"आश्चर्य ! क्या वह तेरे सह भेदी नहीं थे।"

मैं बोला-"केवल दो तीन आदमी मेरे कार्य में भेदी बने हुए थे ! अन्य किसी को यह भी पता नहीं था कि मैं चित्तौड़ में क्यों आया हूँ। वह केवल इतना जानते थे कि मैं राणा का नौकर हूं। गढ़ के बाहर जाते समय भी मैंने किसी से कुछ नहीं कहा और वह दूसरे राजपूतों की तरह लड़लड़ कर मरे होंगे क्योंकि यदि इनमें से कोई भी जीवित बचता तो मुझे इनका पता हो जाता।"

अकबर ने कहा-"तूने बुरा किया। तू गहरा आदमी अवश्य है मगर अनसमझ है। इस तरह वफ़ादार लोगों को धोखे में रखकर केवल अनसमझ ही इन्हें नष्ट कर देते हैं।"

"बात सच्ची थी मगर मैं तो स्वयं अपनी परछांई से डरा करता था। किसी को अपना भेदी कैसे बनाता। अकबर के अन्तिम शब्द मेरे हृदय में जगह कर गये।"

अकबर ने प्रश्न किया-"जो दो तीन व्यक्ति तेरे भेदी थे वे कहां हैं ?"

मैंने उत्तर दिया–"एक मीरता गया हुआ है। दो आगरे में हैं। क्या आश्चर्य वापिस आते हों।"

अकबर बोला–"अच्छा! जो होना था होगया, मुझे तो इस चढ़ाई का कोई लाभ नहीं हुआ। उदैसिंह हाथों से निकल गया। मगर मैंने वायदा किया था कि तुझे बहुत कुछ इनाम दिया जायगा, मैं चित्तौड़ तुझे दूँगा। आगरा जाकर परवाना और खिलत तुझे भेज दूँगा।"

मैंने प्रार्थना की—"मुझे भी आगरा चलने का गौरव प्रदान किया जाय।"

अकबर हँसा–"यदि तेरी ऐसी ही इच्छा है तो अच्छा है। यद्यपि यह और भी अच्छा होता कि तू मीरता से राजपूतों को बुलाकर यहां की सूबेदारी करता।"

अकबर वहाँ एक मुसलमान को सूबेदार नियत करके आगरे चला गया। मैंने भी इसके साथ चलकर पहिले मीरता की ख़बर लेना उचित समझा।

—❀०❀—

❀ बारहवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्टता का पारतोषिक ॥

"अकबर आगरे चला आया। मैंने मीरता जाने में भलाई देखी। चित्तौड़ के बरबाद होने की सूचना वहाँ मुझसे पहिले पहुँच चुकी थी। गाँव वाले समझते थे कि मैं लड़ाई में मारा गया हूँगा। मुझे जीवित देखकर इन्हें आश्चर्य हुआ। राजपूत का हृदय दुनियाँ में विशेष प्रकार का बनाया गया है। इसके भाव भी विचित्र होते हैं। वह युद्ध क्षेत्र के सैनिक को केवल उस दशा में जीवित देखना चाहते हैं जब वह विजयी होकर लौटे। उस समय वह प्रसन्न होते हैं। लेकिन यदि शत्रु की जीत हुई और

कोई राजपूत जीवित बच रहा तो वह उनकी दृष्टि में संदिग्ध तथा घृणित होता है। चाहे कोई प्रत्यक्ष में कराहियत प्रगट न करे मगर इनकी दृष्टि बता देती है कि वह इनकी आंखों से गिर गया है और उनके हृदय में इसके लिये स्थान नहीं है। यदि मैं युद्ध में मारा गया होता तो वह प्रसन्न होते और गर्व से कहते फिरते कि चित्तौड़ के युद्ध में मीरता का भी एक आदमी काम आया था। लेकिन जीवित देखकर वह मेरी ओर कम आकर्षित हुए। मैं उनके विचारों को भांप गया और समझ लिया कि अब यहां मेरा सम्मान नहीं रहा है।"

"कई लोगों ने मुझसे युद्ध के बारे में प्रश्न किये। मैंने उन्हें उल्टी सीधी बातें समझा दीं और उन पर प्रगट नहीं होने दिया कि मेवाड़ का सैनिक होकर अकबर का काम कर रहा था। फिर भी मेरी दशा स्वयं एक तरह पर सन्देह प्रगट कर रही थी। मैंने अपने साथी को ढूँढ़ा। अधिक दिनों तक वहाँ ठहरना उचित नहीं समझा और बिना किसी सूचना दिये हुए आगरे चला आया। वह चार मारवाड़ी युवक मेरे साथ थे।"

"जब मैं आगरे पहुंचा. टोडरमल से मिला। इसने मुझे देखकर प्रसन्नता प्रगट की। बोला-"तुमने यद्यपि अपना कर्तव्य पूरा किया मगर बादशाह का असली मन्तव्य पूरा नहीं हुआ। वह राणा को गिरफ़्तार करना चाहता था। राणा हाथ से निकल गया। इसमें यद्यपि तुम्हारा अपराध नहीं है मगर काम अधूरा रह गया। क्या तुम अब भी इसके पूरा करने में सहायता दे सकते हो ?"

"मेरे हृदय में तो कुछ और ही विचार था। केवल अपनी उन्नति की लालसा थी। चूँकि मैंने अपनी समझ में बहुत उच्च सेवा की थी। इस सेवा का बदला चाहता था जिसका कि बादशाह स्वयं बचन दे चुका था।"

"मैंने कहा कि सेवा करने में मुझे क्या उजर हो सकता

है लेकिन यदि अब मैं राणा के साथ रहने का प्रयत्न करूँगा तो मेरी जान की ख़ैर नहीं है। ये मेवाड़ी बड़े भारी चौकन्ने होते हैं। यदि उन्हें थोड़ा सा भी सन्देह होगया तो वह किसी दशा में मुझे ज़िन्दा न छोड़ेंगे।"

टोडरमल बोला–"लेकिन उन्हें क्या मालूम कि तुम अकबर के नौकर हो ?"

मैंने कहा–"यह ठीक है। लेकिन मेरे अपने सम्बन्ध जो रामपुर से हैं, सम्भव है कि शक शुभा पैदा करें।"

टोडरमल चुप हो गया। यह इतना अनुभवी था कि इससे बात करने की आवश्यकता नहीं होती थी। वह सूरत देखकर भांप जाता था कि इस मनुष्य के हृदय में क्या क्या विचार चल रहे हैं। इसने मुझे आश्वासन दिया और कई दिन के बाद मुझे अकबर के सामने उपस्थित किया।

अकबर ने अपनी आदत के अनुसार मुझे फिर सिर से पांव तक देखा। इसके व्यवहार को देखकर मुझे डर लगा। मुझे पहिले भी अकबर की ओर से खटका हुआ था। मैं चाहता था कि मैं दूध और चीनी की तरह उससे मिलकर रहूँ। मगर जब मैं इससे मिला, इसने हृदय खोलकर कभी मुझसे बात-चीत नहीं की। ख़बर नहीं, टोडरमल ने किस तरह उसके हृदय में स्थान प्राप्त कर लिया था।

अकबर ने पूछा–"राजपूत ! तू आगया ?"

मैंने अर्ज़ किया–'सच्चा सेवक सेवा से दूर कब तक रह सकता है। मैं मीरता होता हुआ आगरे आया हूं।"

अकबर ने प्रश्न किया–"कितनी संख्या राजपूतों की तेरे पास है ?"

मैंने कहा—"केवल इने गिने दो, चार, दस आदमी।"

वह कुछ देर चुप रहा। मैं अदब के साथ खड़ा रहा। अकबर ने टोडरमल की ओर संकेत किया। इसने मुझे बादशाह

की ओर से फिर एक नई खिलत (पोशाक) प्रदान की और एक शाही दस्तखती परवाना दिया। ज़बानी केवल इतना कहा कि–"बादशाह तुमको चित्तौड़ का क़िलेदार बनाता है। तुमको चाहिये कि जितनी संख्या में राजपूत तुम्हें मिल सकें, अपने साथ रक्खो, ताकि तुम शत्रुओं के आक्रमण के भय से बचे रहो। चित्तौड़ में जो मुसलमानों की सैना है वह वहां ही रहेगी और तुम्हारी सहायता करती रहेगी। मगर इस बात की भी बड़ी आवश्यकता है कि तुम्हारे निज के आदमी अधिक संख्या में वहाँ रहें। तुम राणा के ठौर ठिकाने की सूचना बराबर बादशाह को पहुँचाते रहो। उसके पाँव उखड़ गये हैं। यदि सावधानी की गई तो इसका आधीन होना कठिन नहीं है। लोहे को उस समय तक बराबर कूटते रहो जब तक वह गरम है।"

"मैंने स्वीकृति प्रगट की। बादशाह को प्रणाम करके विदा हुआ।"

"आगरे में कई दिन ठहरा। मंत्री और धनीमानी लोगों की दशाओं को देखता रहा परन्तु मझे परिचित होने का अवसर नहीं दिया गया, और न उनकी तरह विश्वासपात्र बन सका। इसका मुझे अत्यन्त खेद रहा। मैंने टोडरमल को अपनी आशाओं की पूर्त्ति का इष्ट बनाया था और उस जैसा कृपापात्र बनने की इच्छा रखता था। भाग्य ने सहायता नहीं की। शायद उसका समय अभी नहीं आया था। संसार आशा पर ही स्थित है और आशा ही साहस बँधाती रहती है।"

"टोडरमल के महल में मुझे जाने का अधिकार प्राप्त हो चुका था। वहां मैं कभी २ अवश्य मिलने जाया करता था। टोडरमल दयालु था। वह मुझे अधिकतर वह बातें समझाया करता था जिनसे भविष्य में उन्नति करने का साहस बढ़ता था।

शेष और सभासदों या मंत्रियों से मुझे कोई सम्बन्ध नहीं था।"

"कई दिन पश्चात् राज्य सेना की एक टुकड़ी को साथ लेकर मैंने चित्तौड़ की ओर प्रस्थान किया। मुझे इस सेना का सेनापति बनाया गया और इसमें हिंदुओं से मुसलमानों की संख्या अधिक थी क्योंकि हिन्दू अब तक राज्य सेवा से ऐतराज़ किया करते थे।"

—❀—

❀ तेरहवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्टाचार के दंड का प्रारम्भ ॥

"मैं चित्तौड़ में आया। अब चित्तौड़ के गढ़ की दशा बदली हुई थी। मुसलमान क़िलेदार ने उसकी सफ़ाई करवा ली थी। कहीं २ मरम्मत का काम भी प्रारम्भ था। दुनियां अतिशीघ्र अपने आप को भूल जाती है। गहलौत राजपूतों ने तो निस्सन्देह चित्तौड़ को छोड़ दिया था परन्तु बनिये ब्राह्मण आदि आकर वहाँ फिर बस गये थे। पहले जैसी चहल-पहल कहाँ थी! चित्तौड़ का दीपक राणा उदयसिंह था। जब वह न रहा फिर उसको असली महत्व कहाँ मिल सकता था। अब वह उजाड़ स्थान इतना बस गया है कि मनुष्य वहाँ रह सकता है।"

"राह में मुझे एक सुन्दर कुत्ता हाथ लग गया था जो मुझ से हिल गया था। मैं उसे अपने साथ लाया था। मार्ग में यह मेरे ही डेरे में रहता था और मेरी चौकीदारी किया करता था। मैंने उसे बहुत संतोषप्रद समझा। उसका नाम हीरा रक्खा। जब मैं उसे हीरा कह कर पुकारता तो वह पूंछ हिलाता हुआ मेरे पास चला आता और प्रेम दर्शाता। मनुष्य कृतघ्न होता है परन्तु कुत्ते में स्वामि-भक्ति होती है। वफ़ादार कुत्ता बेवफ़ा मनुष्यों से कहीं बढ़ कर समझा गया है और मैं भी उसे पसन्द करने लग गया था।"

"मेरे रहने और आराम का प्रबन्ध क़िलेदार ने पहले से ही क रक्खा था। राजभवन खाली था। उसमें स्थान २ पर आवश्यः वस्तुएँ सुसज्जित थीं। आज उसका उत्तराधिकार एक मारवाड़ी सिपाही को प्राप्त हो गया है। समय को बदलते देर नहीं लगती, समय चाहे जो कर दिखाये। पहले मुझे कब ख्याल हो सकता था कि इस प्रकार राणा के महल में मैं रह सकूँगा और चित्तौड़ का शासक नियुक्त किया जाऊँगा। चित्तौड़ का शासक कोई सरल बात नहीं है। यह तो मुझे अकबर और टोडरमल की कृपा से प्राप्त हो गया था। यदि भाग्य ने अधिक सहारा दिया तो मैं राज स्थान में श्रेष्ठ पद प्राप्त कर सकूँगा। यदि अधिक नहीं तो अम्बर के राजा मानसिंह के पश्चात् मैं ही श्रेष्ठ राजपूत गिना जाऊँगा। उस समय मेरे मन में इस प्रकार के विचार बड़े वेग से उत्पन्न हो रहे थे।"

"मैंने क़िलेदार से क़िले की कुञ्जी ली। चित्तौड़ पर अपना अधिकार जमाया और आवश्यक प्रबन्ध मुख्य २ व्यक्तियों के सुपुर्द किये। जो जिस काम को पहले से करता आरहा था, वही सेवा उसके प्रति रक्खी गई। कार्य के बदलने से हानि की सम्भावना थी। मुसलमान क़िलेदार क़िला सुपुर्द करने के पश्चात् उसी दिन आगरा चला गया। मैंने चाहा कि वह दो चार दिन वहां ठहरे और मुझे क़िले के नियम समझा जावे। उसने जहाँ तक समझाने बुझाने का सम्बन्ध है बहुत कुछ समझा बुझा दिया, मगर ठहरना स्वीकार नहीं किया। राज्य आज्ञा भी इसी प्रकार की थी कि वह तुरन्त राज्य सभा में उपस्थित हो।"

"मैंने स्नान किया, भोजन किया और सेना का निरीक्षण किया। हर अधिकारी से आवश्यक बातें पूछीं। इस काम में शाम हो गई। ग्यारह बजे रात के वक्त मुझे इससे अवकाश मिला। राज-भवन के विश्रामशाला में मेरे सोने का प्रबन्ध किया गया था।

थका मांदा तो था ही लेटते ही नींद आगई। हीरा भी कमरे के एक कोने में दबक कर बैठ गया।"

"मैं कितनी देर तक सोया, इसका मुझे कुछ भी पता नहीं है। यदि हीरा भौंका न होता तो मेरी नींद कभी न खुलती। वह जोर से भौंकने लगा। मैं जाग उठा। कुत्ता भौंक कर भय से मेरे पलंग के नीचे दबक रहा। मैंने इधर उधर देखा कि उसके भौंकने का क्या कारण है, मगर मुझे कुछ दिखाई नहीं दिया। मोमबत्तियां जल रहीं थीं। कमरे के बाहर चाँदनी भी खिली हुई थी और वहाँ किसी मनुष्य का पता भी न था। पहरेदार अपने २ स्थान पर स्थित थे। सम्भव नहीं था कि किसी बाहरी मनुष्य का गढ़ के अन्दर आगमन हो सकता हो; क्योंकि सब राजपूत चित्तौड़ को अपवित्र स्थान समझते थे और वहां आने वाले नहीं थे। फिर अगर कोई आया भी तो वह कौन था और कहां से आया और किस अभिप्राय से आया। यह विचार एक के पश्चात् दूसरे मन में आने लगे। मैंने हीरा को पुकारा। मगर डर के मारे वह पलङ्ग के नीचे से नहीं आना चाहता था। पहले उसने ऐसा कभी नहीं किया था। मैं उसे साहसी समझता था। अन्त में उसके भौंकने और इतने डरने का कारण क्या था, मैं सोचने लगा, सोचते २ फिर नींद आने लगी।"

"मगर अभी मेरी आँखें झपकी ही थीं कि कोई शब्द सुनाई दिया। कुत्ते ने फिर भौंकना व गुर्राना आरम्भ किया; किन्तु वह पलङ्ग के नीचे से बाहर नहीं निकला था। मैंने चारों ओर दृष्टि डाली। बहुत से मनुष्य एकओर से दूसरी ओर जाते हुये दिखाई दिये। मैंने पुकारा—'कौन है?' मगर किसी ने उत्तर नहीं दिया न मेरी ओर ध्यान दिया। मैं चकित हो गया। आज गढ़ में मेरी शासक की हैसियत है। क्या मजाल कि कोई मेरी आज्ञा न माने और मेरी बात न सुने। मगर पहले ही दिन धृष्टता व

आज्ञा उलंघन होने लगी। आखिर बात क्या है? मैं उठा व खड्ग हाथ में ली। जिधर मनुष्य आ जा रहे थे उसी ओर ध्यान दिया। मैंने खुली आँखों से उहें देखा। लेकिन जैसे ही कमरे के बाहर पग धरा सब एकसाथ दृष्टि से ओझल हो गये। कहां गये और किस ओर छुप गये,इसकी जानकारी न मुझे अब तक हुई न उस समय हुई थी। मैंने इधर उधर खोज की,लेकिन सब निष्फल रहा। मैं डरा, ऐ ईश्वर! यह क्या भेद है? कोई बात समझ में नहीं आई। जी में तो आया कि मंत्रियों के पास जाकर पूछूँ मगर साहस नहीं हुआ। अपने ओहदे का भी ध्यान था। बरामदे में मेरे आदमी लेटे हुये थे। कौन जाने वह नींद में थे या डर के कारण चुपचाप पड़े थे। उन्हें भी मैंने नहीं जगाया और उल्टे पांव वापिस आकर खाट पर पड़ रहा। भय ने तो हृदय पर अधिकार कर ही लिया था। मैं डरता और काँपता हुआ लेट गया। नींद आगई, सो गया और दूसरे रोज दिन चढ़े तक सोता रहा। जब नौकरों ने प्रातःकाल आकर जगाया तब नींद खुली। कुत्ता उसी तरह खाट के नीचे दबा हुआ पड़ा था। वह बाहर निकलना नहीं चाहता था। बड़ी कठिनाई से बाहर बुलाने पर वह पूँछ हिलाता हुआ आया, मगर उसके देखने से वह भयभीत प्रतीत होता था।"

—❀—

❀ चौदहवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्टाचार के दण्ड की "दूसरी रात" ॥

"मैं शौच आदि से निवृत्त हुआ। नहाया धोया। पूजा पाठ व जलपान किया। फिर सैनिकों को लेकर नगर के देखने के लिये निकला। वहां के निवासी मिले। दण्ड प्रणाम किया। भेटें दीं। मैंने सबको सान्त्वना दी और शान्ति स्थापित करने का वचन दिया।"

"फिर मैं अपने निवास स्थान पर आया, भोजन किया

और कार्यालय में बैठ कर आवश्यक कार्यवाही की। इन सब कामों में सायंकाल हो गया। उस दिन सैर व शिकार के लिये बाहर जाने का विचार था परन्तु समय नहीं मिला।"

"जब दूसरी रात को सोया। नींद में पहले की भांति चूर और बेसुध होगया। पहले दिन तो राह की थकावट से बेसुध सोया था, आज काम काज के कारण थक गया था। कौन जाने कितनी रात बीती होगी कि कुत्ते ने फिर शोर मचाना प्रारम्भ किया, लेकिन था वह खाट के नीचे। मेरी नींद खुल गई। क्या देखता हूं कि बरामदे में बहुत से मनुष्य एकत्रित हैं। मैंने पुकारा। किसी ने भी उत्तर नहीं दिया। मैं उठा! स्वयम् बरामदे में आया। वह सूरतें फिर लोप हो गईं। मैंने हाथ पकड़ कर अपने आदमियों को जगाया। वह उठे मगर भय से काँप रहे थे।"

मैंने प्रश्न किया—"तुम कैसे आदमी हो? बुलाने पर भी नहीं बोलते। ऐसी नींद अच्छी नहीं होती। आखिर तुम यहाँ इस प्रयोजन से रहते हो कि मेरी रक्षा करो। ऐसी असावधानी पसन्द नहीं है।"

एक ने कहा–"महाराज! हम सोने नहीं जागते हैं।"

मैंने पूछा–"फिर उत्तर क्यों नहीं देते।"

दूसरे ने कहा–"हम डरे हुये हैं। भय से हाथ पाँव फूल गये हैं। कोई बात समझ में नहीं आती।"

मैंने प्रश्न किया–"तुमको भय किस बात का है और क्या बात तुम्हारी समझ में नहीं आती।"

प्रश्न करने को तो मैंने किया मगर भयभीत मैं भी था। उन पर अपनी निर्बलता को प्रगट नहीं होने देना चाहता था। पहला मनुष्य बोला। "महाराज! चाहे आप क्रोधित हो जाँय मगर इस स्थान पर खटका अवश्य है। यहां रहने पर किसी न

किसी दिन हम सब पर बला आयेगी। हम राजपूत हैं। जीवित मनुष्यों से तो नहीं डरते ..... ।"

मैं मुस्कराया । "फिर क्या तुमको मुर्दों का डर है ?"

उसने कहा ।"बात तो ऐसी ही है ।"

मैंने पूछा–"साफ़ २ कहो । ज्ञात होता है, तुम स्वप्न देखते रहे हो । स्वप्न से तुम्हें भय हो रहा है ।"

दूसरे मनुष्य ने उत्तर दिया–"नहीं महाराज ! हम स्वप्न नहीं देखते बल्कि खुली आँखों से लीला देख रहे थे और डर से चुपचाप पड़े थे ।"

मैंने कहा—"तुमने क्या देखा ?"

उसने उत्तर दिया–"कल रात जब हीरा भौंकने लगा । हम सबकी आंख खुल गई । आप सो रहे थे । हमने इस जगह बहुत से मनुष्य देखे, जो हथियारों से सुसज्जित थे । पहले तो यह विचार हुआ कि शायद राजपूत बदला लेने की नीयत से गढ़ में आगये हैं । हमने हाथों में तलवारें लीं । उन पर झपटे मगर वह अन्तर्ध्यान हो गये । हम चकित थे । वह इसी स्थान पर देखते २ आँखों से ओझल हो गये थे । हम निराश होकर अपने २ स्थान पर लौट आये । कुत्ता फिर भौंका । फिर हमने उनकी टोली को देखा । फिर उन पर झपटे और फिर वह उसी स्थान पर छुप गये । तीसरी बार भी ऐसा ही हुआ । अन्त में हमने समझ लिया कि यह आदमियों का काम नहीं है। ये भूतों की लीला है। तब डर डर कर लेट रहे । उस समय से हमारे होश ठीक नहीं हैं । आपके कुत्ते ने भी उनकी सूरतें देखी होंगीं । तब ही तो वह भोंक उठा था ।"

"मैं मन ही मन में सोचने लगा । पहले मुझे भूतों के अस्तित्व पर तनिक भी विश्वास नहीं था और न मैंने कभी उनका दृश्य देखा था । अब मैंने दो बार देखे हैं और मेरे आदमी भी

इससे वंचित नहीं रहे। यह भूत आख़िर कौन हैं? और मेरी नींद ख़राब करने के लिये क्यों आते हैं? इनको मुझसे क्या काम है?"

मैंने हृदय को क़ाबू करके कहा—"ज्ञात होगया कि तुम स्वप्न देखते रहे हो। मसल मशहूर है 'लंका डाइन शंका भूत।' स्वप्न की बातों पर भय नहीं करना चाहिए। आगे के लिये तुमको चौकन्ना व चैतन्य रहना चाहिये।"

आदमियों ने कहा—"ऐसी बात केवल वह नहीं समझ सकता है जिसकी दृष्टि के सम्मुख यह दृश्य नहीं आया हो। आपकी दृष्टि कदाचित् उन पर नहीं पड़ी थी, इसलिए विश्वास नहीं होता। आख़िर आपके भी जागने का कोई कारण होगा?"

मैंने कहा—"हीरा भौंकने लगा और मेरी नींद खुल गई।"

वे बोले—"हीरा ने भी उन्हें देखा होगा, क्योंकि कुत्ते बिल्ली, घोड़े और पशुओं को जब भूत दिखाई देते हैं, वह डर के कारण बेचैन हो जाते हैं। बहुधा मनुष्य भूतों को नहीं देखते लेकिन वह पशुओं को दिखाई पड़ जाते हैं। उनकी आंखों की बनावट विशेष प्रकार की होती है।"

मैंने कहा—"तुम कमज़ोर ख्याल के हो। दो चार मनुष्य एक साथ मिले हुए हो, फिर भी इतना डरते हो। यह लज्जा की बात है। स्वप्न की बात पर विश्वास करना अज्ञानता है।"

आदमी बोले—"हम इसे स्वप्न नहीं कहते। हर एक के स्वप्न पृथक २ होते हैं। यह ठीक व प्रत्यक्ष घटना है। आज दो दिन इस दृश्य को देखते हो गये। हम सब चौकन्ने व चैतन्य हैं। अगर यह स्वप्न होता तो सबके सब एक ही समय में इन्हें कैसे देख सकते थे।"

मैं बोला—"अच्छा जाओ। सो रहो। अभी बहुत रात शेष है। कल फिर विचार करना।"

"मैं विश्राम गृह में आया। वह प्रणाम करके अपने अपने स्थान पर लेट रहे। मैं स्वयम् अपनी होश में नहीं था। देर तक इस पर सोचता रहा। कोई बात समझ में नहीं आई और फिर सोचते सोचते नींद आगई और सोगया।"

—❀❀—

❀ पंद्रहवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्टता के दण्ड की तीसरी रात ॥

"रात की वह घटनायें ऐसी नहीं थीं जिनको मैं अपने मन से भुला देता। प्रातः से सायंकाल तक मैं उन पर सोचता विचारता रहा। हृदय भय से भरा हुआ था और रह २ कर वह सताया करता था। बाहर गया मगर वही विचार उपस्थित। काम काज में लगा, मगर उसने चैन नहीं लेने दिया। जी में आया कि मैं सैनिकों से पूछूँ कि क्या उन्होंने भी ऐसे दृश्य कभी अपनी आंखों से देखे हैं या नहीं मगर साहस नहीं हुआ। उससे अपनी शान में बट्टा लगता था। अब मैं साधारण व्यक्ति नहीं था। चित्तौड़ का क़िलेदार एक प्रकार का सूबेदार होता है, और सूबेदार अपने सूबे में बादशाह की हैसियत रखता है। यह सोच समझ कर चुप हो रहा। मेरे साथियों को भी साहस नहीं हुआ कि वह किसी और से पूछते। मैंने उन्हें समझाने को तो उलटी सीधी समझा दी थी मगर वह व्याकुल थे। यदि उनका वश चलता तो इस जगह कभी न रहते, मगर मेरे विश्वासी मनुष्य थे, मुझे छोड़ कर भाग जाना नहीं चाहते थे।"

"तीसरी रात को मैंने सब खिड़कियां व द्वार बन्द कर लिये ताकि मुझे वह दृश्य फिर दिखाई न दे। केवल हीरा मेरे साथ था और अब वह चारपाई हो के नीचे दबका पड़ा रहता था। रात्रि के समय वह बाहर आना नहीं चाहता था।"

"मैं काम काज से निवृत होकर सोने गया। दिल को

समझा बुझाकर लेट रहा। देर तक नींद नहीं आई। पुस्तक पढ़ने लगा। साधारण लोगों में यह विख्यात है कि यदि नींद न आती हो तो किसी पुस्तक का पढ़ना आरम्भ कर दो, मगर इस पुस्तक ने कुछ सहायता नहीं की और कई घण्टे व्यतीत हो गये। तब विवश होकर मैंने अफ़ीम की डिबिया उठाई। और दिनों से अधिक अफ़ीम घोलकर पी गया और आशा करने लगा कि आज बुरे स्वप्नों से छुटकारा मिल जायगा।"

"बड़ी कठिनाई से नींद आई। इतने में बारह बज गये। हीरा फिर भोंकने और गुर्राने लगा। आखें खुल गईं। दीपक के प्रकाश में देखता क्या हूँ कि सब द्वार खुले हुये हैं। ऐ ईश्वर! द्वार किसने खोले। मैं तो स्वयम् इनको अपने हाथों से बन्द करके सोया था। इसके पश्चात् दक्षिण की ओर एक खिड़की के पास कोई व्यक्ति खड़ा हुआ दिखाई दिया जो क्रोध की दृष्टि से मुझे देख रहा था। मैंने पूछा–'तू कौन है?' मगर कोई उत्तर नहीं। वह वैसे ही टकटकी बांध कर देखता रहा। मैंने दूसरी बार उच्च स्वर से वही प्रश्न किया, किन्तु उसका उत्तर भी कुछ नहीं था। मेरे पास एक लकड़ी पड़ी थी। खींच कर मारी। लकड़ी तो दीवार से टकरा कर गिर पड़ी। उसे चोट नहीं आई। उसकी दशा में तनिक भी अन्तर नहीं हुआ। मैंने तलवार हाथ में लेली उस पर आक्रमण किया। तलवार खट से दीवार में लगी। वह उछल कर उत्तर की ओर गया और फिर मेरी ओर घूरने लगा। इस ओर भी मैंने उस पर आघात किया, लेकिन परिणाम कुछ नहीं हुआ। वह कूद कर पच्छिम की ओर आगया और जब मैंने तलवर चलाई तो वह पूरब की ओर द्वार पर आकर खड़ा हो गया, अब तो मुझे पूरा २ विश्वास हो गया कि यह हड्डी मांस से बना हुआ आदमी नहीं है। मैं बहुत डर गया था। आदमियों को पुकारा। वह चुप थे। मैं चाहता था कि

उनको दूसरी बार पुकारूँ मगर इस आकृति ने अपने होठों प उँगलियाँ रखीं कि जिससे मैं यह समझ गया कि वह मुझे पुकारने से रोकना चाहता है। मैंने फिर साहस करके पूछा-'तू आख़िर चाहता क्या है ?' उसने हाथों से संकेत किया। अपने पास बुलाया। मैं डरा हुआ तो था ही मगर इतनी शक्ति नहीं थी कि उसके प्रभाव से बच जाता और उसके संकेत के विरुद्ध काम करता। ईश्वर जाने उसकी आंखों में क्या जादू था ! वह मुझे बे वश व लाचार बना रहा था। मैं उसके पास आया। उसने आगे की ओर पग बढ़ाया, मगर दृष्टि बराबर मेरी ही ओर थी और हाथ से चले आने का संकेत भी करता जाता था। मेरी दशा कौन समझ सकता है। जिस प्रकार भेड़िये को देखकर बकरी भय भीत हो जाती है और दाँतों से उसका कान पकड़ कर भेड़िया जहां चाहता है ले जाता है। ठीक वही दशा मेरी थी। यदि मैं उसके साथ जाने की इच्छा न भी करता तब भी मैं विवश था। बंदरों के बारे में मैंने सुन रखा था कि जब भेड़िया किसी वृक्ष के नीचे आजाता है,वृक्ष के सब बन्दर स्वयम् नीचे उतर आते हैं और हाथों से आंखें बन्द करके चुपचाप बिना डोले डाले बैठ जाते हैं। भेड़िया उनमें से किसी एक को पकड़ ले जाता है। तब उनकी आंखें खुलती हैं और वह फिर वृक्ष पर चढ़ जाते हैं। इस अवसर पर मैं बन्दर बन गया था और वह मेरा पकड़ने वाला भेड़िया था।"

"चित्तौड़ का गढ़ बहुत लम्बा चौड़ा है, इसका क्षेत्रफल कई वर्गमील है। यह व्यक्ति मुझको दूर तक लेगया। वहां एक बड़ा मैदान था। यह वहां ठहर गया। मैं भी चुपचाप खड़ा हो गया। क्या देखता हूँ कि बहुत से राजपूत आये, जिनमें से बहुत से आदमियों को मैं पहँचानता था। उन्होंने लकड़ियों का ढेर लगाया और जब सब कुछ हो गया महल व नगर की स्त्रियां आईं। उस पर बैठ गईं। उस मनुष्य ने आग जला कर लकड़ियों के ढेर को

प्रज्वलित कर दिया। आग की लौ निकलने लगी। तड़ाके का शब्द हुआ। भूमि फट गई और जलती हुई स्त्रियों के हाथ और सिर एक साथ देह से अलग हो होकर आकाश में उड़ने लगे। पूरा मैदान धुयें से भर गया, मगर चूंकि आग बहुत धधक रही थी, यह सब दृश्य मैं खड़ा २ देखता रहा। तड़ाके के शब्द होते ही मैंने चाहा था कि महल की ओर भाग जाऊँ, मगर उस आदमी की दृष्टि मेरी ओर थी। मेरे पांव भूमि में गढ़ गये थे। मैं पत्थर जैसा अडोल हो गया था। आखिर थोड़ी देर में लकड़ियों का ढेर जल कर राख होगया। पहले जैसा सन्नाटा व सुनसान की दशा हो गई। न जीव न जन्तु, हू हक़ का दृश्य! रात्रि साँय साँय कर रही थी। मेरा हृदय भय से कांप रहा था। न कोई आने वाला न जाने वाला।"

"जब यह सब कुछ हो चुका। उस व्यक्ति ने फिर मुझे संकेत किया, वह मुझे अपने साथ शयन-गृह में लाया और उसकी आज्ञा पाकर लेट रहा। भय की अवस्था में नींद अधिक आती है। मैं सो गया तन बदन की सुधि न रही और उस समय जगा जब दिन अधिक चढ़ आया था। उस पर भी यदि आदमी आकर न जगाते तो शायद मैं अधिक देर तक सोता ही रहता। आंख के खुलते ही मुझे रात्रि की घटना याद आई। द्वार ज्यों के त्यों बन्द थे, जोकि रात्रि को मैंने उन्हें खुले हुये पाया था।"

मैंने आदमियों से पूछा—"रात्रि को क्या हुआ था।"

एक ने उत्तर दिया—"कुछ भी नहीं। आप खूब आराम से सो रहे थे। हम भी दो रात के जागे हुये थे। नींद में बेसुध हो गये थे।"

मैंने पूछा—"क्या कुत्ते के भोंकने की आवाज़ तुमने नहीं सुनी थी?"

उत्तर मिला—"नहीं, द्वार बन्द थे। सम्भव है कि कुत्ता भोंकता

रहा हो मगर हम में से किसी ने कोई आवाज़ नहीं सुनी और न इस ओर ध्यान था। सम्भव है कि पहली दो रात्रि की घटनायें स्वप्न या विचार मात्र ही रही हों। आज तो हम को कोई कष्ट नहीं हुआ।"

"मेरी हैरानी की कोई हद नहीं थी। मैंने प्रत्यक्ष अपनी आँखों से आश्चर्य-जनक दृश्य देखे थे किन्तु इन आदमियों को अपने भेद बताना उचित नहीं समझा। चुप हो रहा और काम काज में लगा।"

—❀—

❀ सोलहवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्टता के दृश्यों की व्याख्या ॥

मैंने नित्य की भांति राज काज किया। लोगों से पूछा—"क्या यहां कोई ज्ञानवान पंडित रहता है?" उन्होंने एक विद्वान ब्राह्मण का नाम बताया। मैंने उसे बुला भेजा और एकान्त में बैठकर उससे प्रश्नोत्तर करने लगा।

मैंने पूछा—"क्या भूत प्रेत आदि के अस्तित्व पर आपको विश्वास है?"

पंडित बोला—"क्यों नहीं! यह भी एक प्रकार की योनि है। मनुष्य जिस विचार और जिस काम में मरता है, मरने के पश्चात् उसी प्रकार की योनि उसे प्राप्त होती है। शास्त्र ऐसा कहते हैं और मनुष्य का निज अनुभव भी कभी कभी इसे सत्य साबित करता है।"

मैंने कहा—"यह कैसे होता है?"

पंडित ने उत्तर दिया—"जैसे आप जाग्रत अवस्था में जिस काम और जिस विचार को करते २ सो जाते हैं और इसी प्रकार के काम और विचार का स्वप्न देखते हैं, वैसे ही मरने के पश्चात् जिसने जैसा काम किया है इसी काम का संस्कार इससे चिमटा

रहता है और सेवै ही कार बार से उसे प्रेत योनि में सम्बन्ध रहता है। इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है। यह प्राकृतिक सिद्धान्त है। प्रकृति हर जगह अपने नियम और सिद्धान्त का लौट फेर करती रहती है। जो यहां है वही हर जगह है।"

मैंने फिर प्रश्न किया–"मृत्यु होने पर शरीर तो जला दिया जाता है और वह जल कर भस्म हो जाता है। फिर शरीर कहां रहता है जिससे भूत प्रेत अपना काम करते होंगे?"

पंडित बोला–"महाराज! मनुष्य के तीन शरीर होते हैं स्थूल, सूक्ष्म और कारण। स्थूल तो यह इन्द्रियों वाला देह है जिससे आप इस जाग्रत अवस्था में काम काज करते हो। मन इसका सूक्ष्म शरीर है, जिससे स्वप्न में वह काम काज करता रहता है। कारण शरीर ज्ञान मात्र है जिसमें पूर्णतया सो जाने पर बेसुधी हो जाती है, तन बदन का होश नहीं रहता। चूँकि मानव जीवन की तीन अवस्था हैं। जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति, उस दृष्टि से इसके तीन शरीर भी हैं स्थूल, सूक्ष्म और कारण।"

मैंने पूछा–"जब स्थूल शरीर जल कर भस्म होगया तो इसके साथ इन्द्रियाँ भी तो नाश हो जाती हैं। फिर भूत प्रेत किन इन्द्रियों से काम करते होंगे।"

पंडित ने उत्तर दिया—"मन चूँकि सूक्ष्म है और वह साथ रहता है इसलिये वह आप सूक्ष्म इन्द्रियां गढ़ लिया करता है। आप यों समझिये जाग्रत अवस्था के अलग होने पर स्वप्न में इन्द्रियां तो वहां होती ही नहीं। सूक्ष्म इन्द्रियाँ मौजूद रहती हैं। इन्हीं के सहारे भूत पिशाच अपना काम करते हैं। क्योंकि भूतों का जगत इस सृष्टि की अपेक्षा सूक्ष्म होता है।"

मैंने कहा–"बड़े आश्चर्य की बात है।"

पंडित बोला—"इसमें तनक भी आश्चर्य न करना चाहिये। यह ऐसा ही है और ऐसा ही हुआ करता है।"

मैंने फिर पूछा–"क्या मरने के बाद आत्मा स्वर्ग नर्क को नहीं चला जाता ?"

पंडित ने कहा–"हां, जाता है।"

मैंने कहा–"फिर यह प्रेत योनि कैसी ! योनि तो जन्मने और मरने का नाम है।"

पंडित बोला–"इसी प्रेत योनि का नाम स्वर्ग नर्क है। जो आदमी अच्छा है, अच्छे कर्म करता है और अच्छे विचार सोचता है, वह मरने पर स्वर्ग को जाता है, जो वास्तव में इसका अपना मानसिक जगत है। जो बुरा है, बुरे विचार सोचता है वह मरने पर नर्क को जाता है जो इसका जगत है। स्वर्ग और नर्क दोनों ही मानसिक हैं और ये मनुष्य की प्रबल और दृढ़ शक्ति पर निर्भर है।"

मैंने फिर प्रश्न किया–"यदि यह मानसिक ही है तो फिर इसका कोई महत्व नहीं है।"

पण्डित ने पूछा–"यह क्यों ?"

मैंने कहा–"ख्याल कोई वस्तु नहीं है। इसमें सत्यता नहीं होती।"

पण्डित बोला–"यही तो अनसमझ लोगों की ग़लती है। इस दुनियां में ख्याल ही असली वस्तु है। ख्याल के अतिरिक्त और यहां है क्या ? आपने अपने मान का ख्याल किया, माननीय हो गये। अपमान का ध्यान किया, तुच्छ और अपमानित हो गये। आपकी वर्तमान स्थिति का मूल कारण ख्याल ही पर तो है। आपको ख्याल हुआ कि मैं अपने साथियों में आदरणीय हो जाऊँ और आप इसी विचार से प्रभावित होकर दरबार में पहुंच कर हाकिम बन गये आदि २।"

"मैं पंडित की इस अन्तिम बात को सुन कर कांप उठा। वह सचमुच जो कह रहा था अक्षरशः सत्य था।"

मैंने पूछा-"बात तो आप सच कह रहे हैं मगर भूतों के विषय में मैं इसे सत्य नहीं मानता।"

पंडित ने उत्तर दिया-"मानने न मानने का आपको अधिकार है। प्रकृति का नियम एक है। वह हर जगह एक जैसा कार्य करता है। जैसी जागृत अवस्था वैसी सुषुप्ति की अवस्था। जैसा यह लोक वैसा ही परलोक! जैसे जन्म वैसे ही मरण! जो कार्य मनुष्य जीवन में करता है मरने के पश्चात् भी वह इन्हीं के उधेड़ बुन में लगा रहेगा। इससे उसे बचा कौन सकता है।"

मैंने कहा-"जो व्यक्ति जल मरे हैं, क्या वह दुनियां को अपने जलाने का तमाशा दिखाते रहते हैं?"

पंडित ने कुछ देर सोचा, फिर बोल उठा—"यदि किसी ने जान बूझ कर दृढ़ विचार, दृढ़ प्रतिज्ञा और दृढ़ नीयत से जल कर आत्म हत्या की है, तो सम्भव है कि वह उसी घटना का उलट फेर प्रायः करता रहे, लेकिन जो मर गये हैं और जिनको औरों ने जला दिया है उन्हें ऐसा करने की आवश्यक्ता नहीं है क्यों कि उनमें ऐसा ख्याल नहीं रहता।"

मैंने पूछा—"आत्म हत्या करने वाले ऐसा क्यों करते हैं?"

पंडित बोला-"इनका विचार इसी एक बात पर दृढ़ हुआ था इसलिये वह विवश हैं। प्रेत योनि में रह कर अन्त में वे करें भी तो क्या करें। जो ख्याली (कल्पित) सामान वह दुनियां से अपने साथ लेगये हैं उसी का तो कारोबार करेंगे। दूसरा सामान उन्हें मिलेगा कहां! और दूसरा ख्याल इस दुनियां में लायेंगे कहां से? मृत्यु के बाद जो दुनियां आती है उसकी जड़ इसी दुनियां के जीवन पर है। यदि यहां आकर किसी ने अपना काम बना लिया तब तो ठीक, वर्ना वहां किसी का काम नहीं रहता।"

मैंने कहा—"मान लो कि किसी ने चिता पर बैठ कर

आत्म हत्या की है तो क्या वह उस घटना के उलट फेर के लिये असली लकड़ियां चुनकर चिता बना सकेगा, असली अग्नि लगायेगा और उसका असली शरीर जलेगा। या वह क्या होगा ?"

पंडित ने फिर सोच कर उत्तर दिया—"लकड़ी, अग्नि, और शरीर सब उसके कल्पित होंगे। जैसे स्वप्न में कपिल्त जगत बनता है वैसे ही मृत्यु के पश्चात् भी ख्याल ही काम करता है।"

मैंने प्रश्न किया—"मगर इसके सिवाय लोग भी चिताओं को जलती हुई और भूतों को चलते फिरते देखते हैं। इसमें क्या रहस्य है ?"

पंडित ने कहा—"भूतों में यह शक्ति है कि वह जब चाहें ख्याल के अंशों को स्थूल बना कर दिखा दें।"

मैंने पूछा—"यह किस तरह से हो सकता है ?"

पंडित ने कहा—"जिस तरह भाप पानी बनता है और पानी बर्फ़ बनता है। बर्फ़ फिर गर्मी पाकर भाप की तरह उड़ने लगता है। वैसे ही भूत प्रेत मानसिक जगत के जीव हैं। कल्पित पदार्थ को कल्पित गर्मी सर्दी पहुंचा कर सूक्ष्म और स्थूल बनाकर दिखा देते हैं।"

मैंने कहा—"वह ऐसा क्यों करते हैं ?"

पंडित ने कहा—"जो जैसा है वैसा ही तो करेगा। जिस की जैसी प्रकृति है वह उसी का स्वांग भरेगा। आप की प्रकृति शासन करने की है आप उसे नित्यप्रति हाकिम बनकर दिखाते रहते हैं। मेरी प्रकृति पंडित और ब्राह्मण की है, मैं ब्राह्मण और पंडित के रूप में दिखाता रहता हूं। भूत भी ऐसा ही करते रहते हैं। इसमें तनिक भी आश्चर्य करने की बात नहीं है।"

"मैं पंडित की बातों से प्रभावित हो गया। अब तक तो यदि कोई व्यक्ति ज़ोरदार दलील से यह कह देता कि जो कुछ

मैंने देखा है वह केवल स्वप्न मात्र था तो मैं विश्वास कर लेता। मगर इस पंडित की बातों को सुन कर मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि भूत प्रेतों का अस्तित्व है। वह भी दुनियाँ में विशेष प्रकार की सूक्ष्म सृष्टि है।"

"मैंने पंडितजी को कुछ दान दक्षिणा देकर बिदा किया और दूसरे दिन आने को कह दिया। वह प्रसन्न हो कर आशीर्वाद देकर चले गये।"

—❀०❀—

* सत्तरहवां परिच्छेद *

॥ भ्रष्टता के दंड की चौथी रात ॥

"ईश्वर आदमी पर बलायें डाले, विपत्ति पहुँचाये लेकिन उसे मानसिक कष्ट कोई न दे। मेरे हृदय पर तरह तरह के विचारों का आक्रमण हो रहा था जिन्हें मैं दूसरों से छिपाना चाहता था। आग भीतर ही भीतर सुलग रही थी। इसका धुआं भी नहीं निकलने पाता था। इस दशा को वही समझ सकता है जिस पर ऐसी विपत्ति आई है। मैं सोचने लगा कि भूतों का यह आक्रमण व्यर्थ नहीं है। वे मेरे आदमियों को नहीं छेड़ते। उनका रुझान केवल मेरी ओर है। ऐसा क्यों है और वे मुझ से क्या चाहते हैं? यह इस प्रकार का प्रश्न है जिनका मैं उस समय कोई उत्तर नहीं दे सकता था। यदि उत्तर भी दूँ तो क्या दूँ? जिभ्या खोलने तक का तो साहस नहीं है।"

"दिन किसी प्रकार व्यतीत हो गया। रात्रि आई और रात्रि सहस्रों प्रकार के मानसिक कष्टों का सामान लाई। अब तो मेरी यह दशा हो रही थी कि सोने और नींद में जाने से जी कतराता था। और तो मुझ से कुछ न होसका मैंने राजमहल को सदा के लिये छोड़ दिया। अपना निवास स्थान वही नियत किया जहाँ मुसलमान क़िलेदार रहा करता था। इस परिवर्तन का यह

अभिप्राय था कि अब मुझे भूत न सतायेंगे क्यों कि मैंने यह सु रक्खा था कि भूत केवल विशेष २ स्थान में रहते हैं।"

"मैं क़िलेदार के कमरे में सोया। अफ़ीम घोल कर पीली ताकि नींद शीघ्र आजाय। मगर नींद किसको आती है। आधी रात बीत गई। सब सोगये। मैं रात को घंटे गिनने लगा। दरवाज़े बन्द थे। यकायक घुर्राने का शब्द सुनाई दिया। हीरा चौकन्ना होकर भोंकने लगा। किवाड़ें स्वयं खुल गईं। वही आदमी फिर भीतर आया—होठों पर उँगली रक्खे हुये—मेरी दशा ऐसी थी कि कही नहीं जा सकती।"

मैंने साहस करके पूछा—"तू क्या चाहता है? क्या मैं चित्तौड़ से चला जाऊँ?"

'इसने उत्तर नहीं दिया। मुझे साथ चलने का संकेत किया! मैं अस्त्र शस्त्र लेकर उसके साथ हुआ। हीरा जो दिन के समय सदा मेरे साथ रहता था उस समय आंख बदल गया। पिछली रात को भी वह मेरे साथ नहीं गया था। मैं इस समय विवश सा हो गया था, क्योंकि मुझ में इन्कार करने की ज़रा भी शक्ति नहीं रही थी।"

चाँदनी रात में आज वह मुझे क़िले के मुख्य द्वार की दीवार पर लाया। वहां अगणित राजपूत केसरिया बाना पहिने हुये शस्त्र धारण किये हुये तत्पर थे। तड़ाके का शब्द हुआ। क़िले की दीवार फट गई। राजपूतों ने मुख्य द्वार खोल दिया और वही युद्ध का दृश्य जो मैंने अकबर के साथ रह कर देखा था, फिर दृष्टिगोचर हुआ। तीर छूटने लगे। बन्दूकें चलने लगीं। राजपूत और मुसलमान शपाशप तलवारें मारते हुये एक दूसरे को निष्ठुरता से क़त्ल करने लगे। मैं इस बात को क्यों फिर वर्णन करूँ, केवल इतना ही बहुत है कि जो कुछ पहिले देखा था वही आज भी देखा। कुल राजपूत कट कट कर मर गये।

हां, इतना अन्तर अवश्य था कि लड़ाई के समय तो चिल्ल पुकार की धुन सुनाई देती थी, इस अवसर पर चारों ओर ख़ामोशी छाई हुई थी । केवल तलवार और बन्दूक़ों का शब्द अवश्य सुनाई देता था। कभी कभी तोप और बन्दूक़ चलने की रोशनी भी उठती थी। थोड़ी देर के पश्चात् सब राजपूत मारे गये और मुसलमानों की बची हुई सेना डेरे की ओर वापिस चली गई।"

"फिर सन्नाटा छा गया। मेरे साथी ने संकेत किया। मैं इसके साथ अपने निवास स्थान पर आया। वह चला गया। मैं सो रहा। दूसरे दिन प्रातःकाल देर से उठा।"

—❀:०:❀—

❀ अठारहवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्ट दृश्यों की विशेष व्याख्या ॥

"नियत समय पर वह पंडित आया। मैं उसकी प्रतीक्षा में बैठा हुआ था। आज मैं प्रत्येक दिन से अधिक व्याकुल था। हृदय कहता था कि यह रात की घटनायें मेरे जीवन के लिये भयंकर हैं मगर मुझे इनसे बचने का कोई उपाय समझ में नहीं आता था।"

मैंने इससे कहा–"कल की बातों पर मैं मनन करता रहा हूँ। अब यह बताइये कि भूत जो अपने जीवन का तमाशा दिखाया करते हैं, उसका रहस्य क्या है और किस कारण से ऐसा हुआ करता है।"

पंडित ने उत्तर दिया कि इस प्रश्न का उत्तर तो मैंने दे दिया था। इससे अधिक मैं नहीं कह सकता।

मैंने पूछा–"क्या यह दृश्य केवल विशेष विशेष लोगों के देखने में आता है अथवा प्रत्येक व्यक्ति उसे देख सकता है।"

पंडित ने कुछ देर के पश्चात् उत्तर दिया–"केवल विशेष विशेष व्यक्ति इसे देख सकते हैं। इसके कई कारण हैं। प्रथम इनका दारमदार आंख की बनावट और मन के विश्वास पर है। हम बहुत सी सूक्ष्म अथवा स्थूल वस्तुओं को नहीं देख सकते। जो वस्तु कि एक चींटी देखती है वह मनुष्य नहीं देख सकता। दोनों के नेत्रों में अन्तर होता है। इसी में सम्मिलित एक बात और भी है। जगत में जितनी घटनायें होती हैं। उनका प्रतिबिम्ब आकाश के सूक्ष्म पर्दों पर खिंच जाता है और वह सुरक्षित कर लिया जाता है। जिनके नेत्र अध्यात्मिक (रूहानी) होते हैं, वे उन्हें देख सकते हैं। देह वाले बाहरी नेत्रों के लिये उनका दृष्टिगोचर होना कठिन है। या तो मनुष्य के नेत्र स्वाभाविक रूप से ऐसे बने हों अथवा कभी २ देवता, ऋषि और भूत आदि इन लोगों को ऐसी दृष्टि दे देते हैं जिनको वे दिखाना चाहते हों तब इन दृश्यों को कोई देख सकता है। हमारे शास्त्रों में लिखा हुआ है कि जब भयङ्कर महाभारत का युद्ध हुआ तो चूँकि अन्धे धृतराष्ट्र ने संजय ऋषि से कहा था कि मैं अपने पुत्र दुर्योधन की शूर वीरता खुले नेत्रों से देखना चाहता हूँ, संजय ने अपने हाथों से इस अंधे के नेत्र छू दिये। उसे दिव्य दृष्टि मिल गई। चूँकि आकाश मण्डल के ऊपर हर एक योधा के चरित्र के चित्र खिंचे हुये थे और आकाश ने पर्दों में सुरक्षित कर रक्खा था, उसने सब कुछ देख लिया। अनसमझ मनुष्य को इसके भेद की जानकारी नहीं है वर्ना जिस घर में जो व्यक्ति आकर रहते हैं उनका प्रतिबिम्ब उसकी दीवारों में सदा के लिये खिंच जाता है। बार बार सफेदी करने पर भी वह दूर नहीं होता। यह प्रकृति का माना हुआ सिद्धान्त है। ठीक इसी प्रकार इन भूतों के वर्णन को समझना चाहिये। समस्त भूत प्रेत पहिले आदमी ही तो थे। इन्होंने जो कार्य किये हैं इनका सम्पर्ण

नक्शा आकाश मंडल में मौजूद है। इसी का नाम चित्रगुप्त है। अतः ऐसे नेत्रवाले ही भूतों के कार्य देखते हैं दूसरे इनसे वंचित रहते हैं।"

"मैं पंडित के विस्तृत ज्ञान और समझ बूझ की दशा देख कर दंग रह गया।"

पंडित ने कहा—"दो ग़रज़ होती हैं। या तो इसे दिखा दिखा-कर अपना बदला लेते हैं और कष्ट पहुँचाते हैं और या इनका कोई काम दुनियां में करना शेष रह गया वह उसे उसकी सहा-यता से पूर्ण कराना चाहते हैं।"

मेरी समझ में पंडित की ये बातें नहीं आ

मैंने कहा—"इन बातों को स्पष्ट करके ह दीजिये। तब मैं समझ सकूँगा।"

पंडित बोला—"एक आदमी है जिसने बहुत सा धन एकत्रित किया है और इसका संकल्प था कि यह धन ब्राह्मणों और दीन दुखियों में किसी समय बांट दिया जायगा, र वह समय से पहिले मर गया। मृत्यु के पश्चात् इसे इस धन की चिन्ता रहती है और बार २ उसे पृथ्वी की ओर रुझान करना पड़ता है। यदि कोई नेक मनुष्य पूछ कर इसकी इकत्रित धन सम्पत्ति को पुन्यार्थ बाँट दे तो फिर वह किसी पर प्रगट न होगा। इसी तरह इस प्रकार की हर एक बात के विषय में जान लेना चाहिये। दूसरे कारण के विषय में आप इस तरह समझिये कि किसी ने किसी व्यक्ति की हत्या कर दी है या किसी और तरह से इसकी हत्या का कारण हुआ है और उसकी मृत्यु से उसका वंश बर्बाद हो गया है। अब यह बार बार अपने शत्रु पर प्रगट हुआ करता है ताकि वह भयभीत रहे और हैरान और परेशान होकर जान दे दे। यह प्राकट्य बदले की भावना से होता है। इसकी अग-णित क़िस्में हैं। जहाँ कहीं कि भूतों के खेल किसी आदमी को

यों ही दृष्टिगोचर हो जायें, वहाँ समझ लेना चाहिये कि वह देखने वाले की आँख का विश्वास और स्वभाव है। इसके अतिरिक्त और कुछ ध्येय नहीं है। उदाहरण रूप से किसी जगह घोर संग्राम हुआ हो और लाखों आदमी कट कट कर मर गये हों यदि ऐसी घटनायें रात या दिन को दिखाई दें तो ये इस तीसरे प्रकार के दर्जे में गिने जाते हैं।"

"पण्डित जिस समय यह बातें कह रहा था, मेरा हृदय कष्ट से नीचे बैठा जा रहा था। उसे यह कहां ज्ञात था कि इसके शब्द मेरे हृदय पर तीर और नश्तर का घाव कर रहे थे।"

मैंने पूछा—"भूतों के जिभ्या होती है या नहीं।"

पंडित बोला—"यदि आपको स्वप्नावस्था में स्वाद लेने और बोलने की शक्ति मिलती है तो भूतों को भी प्राकृतिक रूप से जिभ्या होनी चाहिये।"

यहाँ पंडित ने ग़लती खाई। भूत मुझको चार बार मिले मगर एक बार भी मुझसे वार्तालाप नहीं की। इससे साबित था कि भूत गूँगे होते हैं।"

मैंने कहा—"आप ग़लती कर रहे हैं। भूतों के जबान नहीं होती।"

पंडित ने पूछा—"यह आपने कैसे जाना। क्या आपका निजी अनुभव है या सुनी सुनाई बात कह रहे हैं?"

मैं सँभल न सका, कहा—"यह मेरा निज अनुभव है।"

पंडित ने सोचा—"सम्भव है कि आपसे भूतों ने वार्तालाप न की हो। इसका कोई कारण होगा। किसी और अवसर के लिये इन्होंने अपनी जिभ्या रोक रक्खी होगी। मैंने सिद्धान्त की बात आपको सुना दी। सिद्धान्त में त्रुटि और दोष नहीं होता है।"

मैंने पूछा—"आप जो बार बार स्वप्नावस्था का वर्णन

करते हो, तो क्या मैं इससे यह परिणाम निकालूँ कि भूतों का सम्बन्ध केवल स्वप्न के जगत से ही होता है।"

पंडित ने कहा—"इसमें संशय ही क्या है। दुनियां जिसको मृत्यु कहती है वह बड़े स्वप्न ही का पेश खेंमा (अगुवानी) है। स्वर्ग, नर्क अपवर्ग सब ही स्वप्न के खेल हैं।"

मैंने कहा—"फिर भूतों से डरने की तो आवश्यकता नहीं है। वह स्वप्न की घटनाओं की तरह झूँठ और असत्य हैं। जैसे स्वप्न में असलियत नहीं है वैसे ही भूत भी झूँठे और असत हैं।"

पंडित बोला—"बात तो यही है मगर पापी लोगों को इनसे डर होता है। भले लोग इनसे नहीं डरते। भले लोगों को भूत डराते भी नहीं। वे निडर होते हैं। कहावत प्रसिद्ध है- "नेकी नेक बदी बद।" बुरा आदमी जब अपनी छाया से डरा करता है तो वह भूत का भय क्यों न करेगा। भूत जो उसे सताया करते हैं तो उनका सताना किसी ग़रज़ से ही तो होगा। बिना ग़रज़ के दुनियाँ में कोई काम नहीं होता।"

"इन वाक्यों को सुनने से मैं मन में काँप रहा था क्योंकि मेरा मन सचमुच शुद्ध नहीं था और चार रातों के मामले मुझे व्यर्थ में भयभीत कर रहे थे।"

"इसने आशीर्वाद दी और बिदा होकर चला गया। आज भी मैंने उसे कुछ दक्षिणा दी।"

*** उन्नीसवां परिच्छेद *** —❀०❀—भ्रष्टता के दंड की पांचवी रात

"ऐ विपत्त ! जिनका हृदय कोमल है, दो चार आँसू बहाने के पश्चात् उनको ठंडक मिल जाती है, लेकिन पत्थर जैसे कठोर हृदय वालों के नेत्रों से तो आंसू भी नहीं निकलते। छल कपट का जीवन ही स्वयम् विपत्ति है। हृदय हर समय धड़कता रहता है। भय सवार हो जाने से धैर्य और स्थिरता सदा के लिये

भाग जाते हैं। सीधे सादे लोग ईश्वर की कृपा पर भरोसा करते हैं मगर जिसको छल कपट से सम्बन्ध है, वह ईश्वर पर क्या भरोसा रक्खेगा। वह समझता है कि जो कुछ होगा वह मेरी ही चालाकी और चतुराई से होगा और वह व्यवहार में ईश्वर के अस्तित्व से भी इन्कार करने लग जाता है और इस सच्चे सहारे से भी बंचित हो कर अपने जीवन को स्वयं दुखदाई बना लेता है। जब उसे ईश्वर तक का विश्वास नहीं रहा तब वह किसी आदमी का भरोसा कब करने लगा। जिस तरह वह दूसरों को अपनी सफलता का शस्त्र बनाता है वैसे ही दूसरे आदमी भी उसे अपने स्वार्थ पूर्ति का साधन बनाया करते हैं। न वह किसी का होता है और न इसका कोई होता है। घर में रहता हुआ वह परदेशी है। परदेश में भी हृदय से कोई इसकी ओर रुझान नहीं करता।"

"मैंने आदर सम्मान प्राप्त कर लिया। चित्तौड़ में सबसे उच्चाधिकारी था लेकिन मैं यहां आकर क्या खुश था! इसकी समझ केवल मुझ ही को है। अभी यहाँ आये केवल पांच दिन हुये हैं और पांच दिन में मेरे पांच जन्म हुये। पांचों दिन बेचैनी में व्यतीत हुये। मैं कह कुछ रहा हूँ और मन कहीं और है। जीवन असह्य होगया। अन्त में इसका परिणाम क्या होगा, मैं इस विषय पर सोचता रहता था। लड़के चौबीस वर्ष के पश्चात् युवा होते हैं। युवावस्था चौबीस वर्ष के पश्चात् ढल कर अधेड़पन में बदल जाती है। और दूसरे चौबीस वर्ष व्यतीत होने पर बुढ़ापा आता है मेरी आयु इस समय बीस वर्ष से अधिक नहीं थी। जब मैं डाँके डालता था तब भी मुझ में उमंग और साहस था मगर अब क्या दशा है। अभी २४ वर्ष

की आयु भी नहीं हुई और चित्तौड़ के पांच दिन के निवास ने ही मुझे बूढ़े से भी अधिक बुरा बना दिया।"

"दिन ज्यों त्यों करके बीत गया। रात आई। पलंग पर लेट कर करवटें बदलने लगा। सब लोग तो नींद में चूर होगये। मेरे नेत्र बन्द होने से इन्कार कर रहे थे। दरिद्र से दरिद्र आदमी को और नहीं तो नींद का आनन्द तो प्राप्त होता है मगर मैं इससे भी बंचित था। यह ऐसा क्यों हुआ, यह मेरे आचरणों का परिणाम था।"

"आधी रात हुई, दरवाजा खुला, अरे भय! वह आदमी फिर आकर मौजूद हो गया। इसके पीछे एक स्त्री भी आई। चौकन्ना होकर पलङ्ग पर बैठ गया। यह एक तो कष्ट का कारण था ही, अब देखना है यह स्त्री क्या अत्याचार करती है। दोनों ने हाथों से संकेत किया। मैं पहिले की भाँति उनके साथ हो लिया। वे मुझे उस स्थान पर लेगये जहां मैंने जलती हुई चिता का दृश्य देखा था। राजस्थान की रातें बहुत ठण्डी होती हैं। हवा तेजी से चल रही थी। हम तीन के अतिरिक्त वहां चौथा कोई भी नहीं था। मैं खड़ा होगया। स्त्री ने बैठने का संकेत किया। मैं भूमि पर बैठ गया।"

स्त्री ने जिभ्या खोली "राजपूत! क्या तू वास्तव में राजपूत है? मुझे तेरे राजपूत होने में संशय है।"

मैं डर गया। पूछा—"तुम क्यों ऐसी बातें कह कर मुझे दुखी कर रही हो?"

स्त्री बोली—"अभी क्या है! अभी तो तेरे दुखों के जीवन का प्रारम्भ है। इब्तदाये इश्क है रोता है क्या, आगे २ देखना होता है क्या।"

मैंने कहा—"यह ऐसा क्यों हो रहा है ?"

स्त्री बोली—"यह तेरे अपने आचरणों का परिणाम है। तूने जैसे बीज खेत में बोये थे, वैसी ही फ़सल तुझे काटनी पड़ेगी। क्या तू अभी से मुझे भूल गया। मेरे रूप को देख। निश्चय है कि तू पहिंचान लेगा।"

मैंने ध्यान पूर्वक इसे देखा। वह मेरी मँगौती चम्पावती थी। उसका मुख सफेदी लिये हुये पीला पड़ रहा था। नेत्र धँसे हुये ! चेहरे से उदासी टपकती हुई।

मैंने कहा—"तू चम्पावती है।"

चम्पावती ने कहा—"हाँ, मैं वही हूँ मगर तू इस निर्लज्जता से मेरा नाम क्यों लेता है। मुझ से तुझे अब कोई सम्बन्ध नहीं रहा। जीवन के सम्बन्ध मृत्यु के पश्चात् बदल जाते हैं। तूने मेरा जीवन बर्बाद कर दिया। तू मेरा प्राणों का गाहक शत्रु है और इस योग्य है कि मैं अपने हाथ से तेरी हत्या करदूँ। मगर ऐसे अपवित्र कार्य से अपने हाथ को अशुद्ध न करूँगी। समय स्वयम् तुझे दण्ड दे रहा है।"

मैंने कहा—"धन्य है, तू अब तक जीवित तो है।"

चम्पावती हँसी—"मुझे तू जीवित समझ रहा है। मैं तो उसी दिन मर गई जिस दिन तू गढ़ से निकल कर शत्रु से मिल गया था तू मुझे जीवित न समझ। मैं मुर्दा हूँ और तू आप भी मुर्दा है। मेरी स्थूल देही की मृत्यु हुई ! तेरी स्थूल देह की व्यवहारिक और अध्यात्मिक मृत्यु साथ २ आगई।"

मैंने पूछा—"यदि तू मुर्दा है तो बोलती कैसे है ?"

चम्पावती बोली—"मूर्ख ! मुर्दा भी बोलते हैं। मैंने राणा के लिये लड़कर पुत्तू की माँ और स्त्री के साथ प्राण दे दिये। मेरा शरीर मिट्टी में मिल गया। अब केवल आत्मा ही आत्मा शेष है। यह केवल इस लिये आई कि तुझे तेरी बुराई का स्वाद

चखादे। जिस तरह हर भले कार्य का प्रतिफल है वैसे ही प्रत्येक बुरे कर्म का दुनियां में दण्ड भी नियत है। तू तो यह समझ रहा था कि छल कपट करके जीवन में गुलछर्रे उड़ायेगा मगर यह कठिन है। अन्त में अपने हृदय को देख तेरी क्या दशा है। क्या तू खुश है। कभी सम्भव नहीं है कि तुझे खुशी प्राप्त हो। खुशी कुकर्मियों के भाग में कभी नहीं आती। जो जैसा करेगा, वैसा भोगेगा।"

"मैं डर गया! चम्पावती! मुझ पर दया कर। ऐसी कटी जली न सुना। मैं अत्यन्त दुखी हूं। जीवन भार हो रहा है। मृत्यु भी नहीं आती, तू क्षमा कर। मैंने तुझे धोखा नहीं दिया। अभी तक तेरी प्रीति मेरे हृदय में बाक़ी है।"

चम्पावती बोली–"ऐ भ्रष्टाचारी! मेरा नाम अपनी गन्दी जिभ्या से न ले। मैं पतित नहीं हूँ। तू मुझ से क्या प्रेम करेगा। प्रेम तो मानव हृदय का सबसे शुद्ध भाव है। जिसमें प्रेम होता है वह बुरे कर्मों से बचता है। आप पवित्र हो जाता है और अपने प्रभाव से दूसरों को भी शुद्ध कर देता है। तूने मुझे धोखा दिया। मैं तेरे धोखे में आगई और मेरा अन्तिम परिणाम हुआ जीवन का अन्त और हृदय के टुकड़े २।"

मैंने पूछा–"तुझे मैंने क्या धोखा दिया?"

चम्पावती ने उत्तर दिया–"अपने मन से पूछ। वह तुझे आप बता देगा। क्या तेरा हृदय भीतर ही भीतर चुटकियाँ नहीं लेता। तूने मुझ से आदि से अन्त तक सब झूंठ कहा। तू मेरा, मेरे राणा का, राणा की समस्त राजभक्त प्रजा का, राजपूतों का, हिंदुओं का और दुनियाँ के सब लोगों का शत्रु है। जिन शत्रुओं से मिल कर तू हम सब के नाश का कारण हुआ, क्या वह तेरा विश्वास करते हैं। छली कपटी और नीच

आदमियों का कोई विश्वास नहीं करता। तू आप इसे जानता है और मुझ से अधिक अच्छा समझता है।"

मैंने कहा—"मैंने कोई ऐसी बात तो नहीं की जिसका दोषारोपण तू मुझ पर करती है।"

चम्पावती बोली—"यह बातें स्वयम् तेरी मलिनता का प्रमाण है। सँभलजा! मैं तुझे अभी तेरे कुकर्मों के फल का तमाशा दिखाती हूँ। उस समय तू ऐसी बातें बनाना भूल जायगा।"

चम्पावती ने तालियां बजाईं। तड़ाके का शब्द हुआ। चिता की भूमि फट गई। आकाश धुआंधार बन गया। बादल गरजने लगे। बिजली चमकने लगी। पृथ्वी हिलने लगी। वायु इतने वेग से चली कि चलना कठिन हो गया। यह वायु धुयें को उड़ा ले गई। आकाश स्वच्छ हो गया। मैं इस फटी हुई भूमि को देखने लगा। सबसे प्रथम उसमें से कई स्त्रियाँ निकलीं जिन की गोद में थोड़ी आयु वाले बच्चे थे, वह इन्हें लाकर मेरे सामने दिखाने लगीं।"

चम्पावती बोली—"देख! यह देश के बच्चे हैं जो तेरे दुराचार के कारण अनाथ हो गये। जब मां बाप कोई नहीं रहा, भूक प्यास से तड़प तड़प कर प्राण त्याग दिये। इन सबकी हत्या तेरे ही ऊपर है। तू हत्यारा है।"

"फिर चिताओं से बहुत सी नवयुवतियां मुर्दों को कंधों पर रक्खे हुये बाहर आईं और मेरे सामने इनको पेश किया।"

चम्पावती ने कहा—"ऐ पापी! यह क़ौम की वह विवाहित पुत्रियां हैं जो तेरे दुराचार के कारण विधवा हो गईं और संरक्षकों के न रहने के कारण से या तो आत्महत्या कर बैठीं या भूख से प्राण त्याग दिये।"

"इसके पश्चात् गुट के गुट सशस्त्र राजपूतों की लाशें

अधिक संख्या में अपने आप बाहर आगईं। किसी की गर्दन कटी हुई, किसी का सिर धड़ से पृथक, किसी के हाथ पांव नहीं, किसी का देह सिर से पांव तक कुचला हुआ। लाशें एक एक करके आप ही आप मेरे सामने आगईं। उनका लाने वाला कोई नहीं था।

चम्पावती बोली—"यह देश भक्त, भले और सच्चे राजपूत हैं जिन्होंने सबसे प्यारे हिन्दूपति और क़ौम के सरदार की वफ़ादारी में अपने आपको बलिदान कर दिया। इन ग़रीबों का अन्तिम मृतक संस्कार तक नहीं किया गया।"

लाशें अगणित थीं। मैंने इन सब दर्दनाक दृश्यों को देखा इसके बाद अधिक संख्या में स्त्री पुरुष छाती और सिर पीटते हुये बाहर आये। मैं देखता क्या हूँ कि वे मेरे सामने आते गये और पृथ्वी पर गिर गिर कर अलोप होते गये। इनके पीछे गाय, बैल, भैंस, घोड़े, ऊँट, हाथी और बहुत से पशु आये और गिर गिर कर दृष्टि से ओझल हुये। एक के बाद दूसरा नाटक का तमाशा मुझे दिखाया गया। खेत ऊजड़, फसल नष्ट, अकाल, मरी और दुखियों की मृत्यु, राणा का भाग कर जान बचा ले जाना पहाड़ के दर्रों में छिप रहना, चित्तौड़ गढ़ की नष्ट की हुई दीवारें, इसकी वे रौनक़ी और नगर का उजाड़, तात्पर्य कि हर प्रकार के दृश्य जो युद्ध के परिणाम होते हैं, दृष्टि के सामने आते गये। मैं घबरा गया और नेत्रों को हाथों से ढक लिया।"

चम्पावती ने पुकारा—"आंखों को न मींच। देखता चल कि तेरी मक्कारी ने मेवाड़ की भूमि को कैसा धक्का पहुंचाया। तू इस विनाश का कारण है। तू अकबर का मुख़बिर होकर चित्तौड़ में आया था तूने उसे हमारे सर्व प्रिय और प्राणों से प्यारे राणा के निर्बल पहलओं की सूचना दी और लाखों आदमी तेरे कारण जान और माल दोनों से बंचित हो गये।

धूर्त ! कपटी ! भेदी ! जासूस ! देश द्रोही ! तू दुष्टता की साक्षात् मूर्ति है। तू इतना मलिन है कि तेरे हृदय की गंदगी से नर्क कुण्ड भी शरण मांगता है। तूने दो दिन के दुनियावी जीवन के कारण ऐसे ऐसे इनाम प्राप्त किये हैं। शारीरिक जीवन तुझे बहुत प्यारा है। तू आया है राणा उदैसिंह की जगह राज्य करने ! देखें तो सही तू यहां किस तरह राज्य करता है। राणा का उत्तराधिकारी वह होता है जो हिन्दूपति कहलाने का अधिकारी हो। हिन्दुओं में सबसे गिरा अहिन्दू ! तू पैदा होते ही मर क्यों न गया। तेरे जन्म लेने की आवश्यकता क्या थी तुझे घुट्टी पिलाते समय तेरी मां ने विष क्यों न देदिया। वह कैसी अनसमझ राजपूतिनी थी। देश के निर्लज्ज ! मनुष्यों में निर्लज्ज !! क़ौमी गद्दार !!! राजद्रोही !!!! तू हमारे बिगाड़ और विनाश का कारण हुआ है। तुझे इस चित्तौड़ में एक क्षण को भी चैन न मिलेगा। अकबर की हिमायत काम न आयेगी। अभी केवल पांच दिन तुझे यहाँ आये हुये बीते हैं। आज मैं तुझ से बात चीत करने के लिये आई हूँ। अभी जैमल, पुत्तू व अन्य राजपूत बारी बारी से तुझे मिलेंगे। दिन प्रतिदिन ऐसे ही दृश्य दिखाये जायेंगे। जबतक तेरी स्थूल देह नष्ट न हो जाय, यही क्रम चलता रहेगा। तेरी सात पीढ़ी के पूर्वज मां बाप भी दिन प्रतिदिन आकर तुझे धिक्कारेंगे। जब तू मर जायगा, मृत्यु के पश्चात् भी तुझे ऐसे ही पापड़ बेलने पड़ेंगे। देखना है कि तूने अपनी क़ौम, अपने देश और अपने अन्नदाता महाराज को तो धोका दिया, मगर मुर्दों, नर्क कुण्डों और यमदूतों को कैसे धोका देगा। तू इस योग्य है कि तुझे मारवाड़ की रेतीली भूमि में ऐसी जगह तड़पा तड़पा कर मारा जाय, जहाँ प्यास के समय एक बूंद भी जल न मिले। मगर नहीं ईश्वर को कुछ और ही मंजूर है। कल देखना ! महाराजा जैमल जो तेरा साथी और रक्षक था और जिसने मेरे बाप से तेरी

शिफ़ारस की थी किस तरह तुझे बुरा भला कहता है। आज तो केवल मेरी बारी थी।"

मैं नेत्र नीचे किये हुये चुपचाप खड़ा सुन रहा था। कलेजे में तीरों की गांसियां चुभ रहीं थीं। पांवों के नीचे की ज़मीन खिसक रही थी। इतने में ज़ोर के साथ बन्दूक और तोपें चलने लगीं। मैं डर के मारे भूमि पर गिर पड़ा। दूसरे दिन अपने कमरे में बेहोश पाया गया। द्वार खुला हुआ था। आदमी आये। मुझे पलँग पर पड़ा पाया। मुझे नहीं मालूम हो सका कि कौन यहाँ लाकर छोड़ गया था।"

—❀—

* बीसवां परिच्छेद *

॥ भ्रष्टता के और बदले ॥

प्रात काल हुआ। जिस समय मैं स्नान से निवृत हो गया, मेरी अर्दली के सिपाही उपस्थित हुये।

मैंने पूछा—"क्या समाचार है?"

उत्तर दिया गया—"अकबर ने जितने राजपूत सैनिक गढ़ की रक्षा के लिये भेजे थे, सब के सब चले गये। अब इनमें से एक भी नहीं रहा।"

"ऐसा क्यों हुआ?"

"मुसलमान फ़ौजी अफ़सर कहता है कि वे डर गये थे। इन्हें राणा के गढ़ में रहना स्वीकार नहीं था। वे यहाँ रहना नहीं चाहते थे। अवसर की प्रतीक्षा में थे। इन्हें भयानक स्वप्न आते थे। वे रात को मैदान में चलते फिरते हुये भूतों को देखा करते थे, जिसके कारण वे भयभीत हो गये थे।"

"वे आख़िर कहाँ चले गये?"

"कोई कहता है कि वे आगरे को बादशाह के पास चले

गये। किसी का विचार है कि इन्हें ऐसी भयानक जगह म नौकरी करना मंजूर नहीं है।"

"मैंने मुसलमान अफ़सर को बुला भेजा। वह बेचारा उसी समय दौड़ा हुआ आया।"

मैंने पूछा—"राजपूतों को भागने का अवसर तुमने क्यों दिया ?"

अफ़सर ने उत्तर दिया—"मैं निर्पराधी हूं। वे अत्यन्त असंतुष्ट हो रहे थे।"

मैंने प्रश्न किया--अब तक तो वह यहां से नहीं गये थे। आज ही बिना कहे कैसे चले गये ?"

अफ़सर बोला-"यह भेद मुझे नहीं मालूम है और न मैं कुछ बता सकता हूं।"

मैंने कहा-"इन की खोज में आदमी जायें और जहां पायें, बुला लायें। यह बड़ी बदनामी की बात होगी। बादशाह हम तुम को आखिर क्या कहेगा।"

अफ़सर ने उत्तर दिया—"पीछा करने में व्यर्थ ही रक्तपात का भय है। वे लौटने वाले नहीं हैं और अन्देशा है कि लड़ाई भिड़ाई में आपकी सुरक्षित सैना भी बहुत कम हो जाय। शत्रु का देश है। उस समय ईश्वर जाने क्या बात सामने आये।"

बात सच्ची थी। मैं चुप हो गया।

अफ़सर ने फिर कहा—"हुजूर ! मुझे भी कुछ विनय करनी है।"

मैंने कहा-"कहो क्या कहते हो।"

अफ़सर बोला—"मुझे भी आगरा जाने की छुट्टी दी जाय। मेरा मन उचट गया है। यहाँ एक दिन के लिये रहना स्वीकार नहीं है।"

मैंने पूछा–"यह क्यों ? क्या मेरा बर्ताव तुम सब लोगों के साथ अच्छा नहीं है ?"

अफ़सर ने उत्तर दिया—"बर्ताव की शिकायत नहीं है। यह स्थान अत्यन्त भयानक है। यहां रात को स्थान २ पर तोप और बन्दूकें चलती रहती हैं। ऐसे दृश्य दिखाई देते हैं जिनसे रोंगटे खड़े होते हैं। एक दिन की बात हो तो कोई कहे। दिन प्रति दिन यही मामला रहता है। मैं डर गया हूं। जान सबको प्यारी है।"

मैं हँसा—"तुम बहादुर पठान होकर ऐसा कहते हो।"

अफ़सर बोला—"बहादुरी की परीक्षा तो युद्ध में होती है। आपकी आज्ञा की देर है, जिसको कहिये हम जाकर धर दबायें। मगर ऐसे प्राणियों से तो लड़ाई भी नहीं हो सकती, जिन पर कोई हथियार असर नहीं करता। मैंने स्वयम् इनको आदमी समझ कर बन्दूकों का निशाना बनाया और गोली तक नहीं लगी। कहिये, क्या किया जाय ?"

मैंने कहा—"फिर क्या राय है ?"

अफ़सर ने उत्तर दिया—"मैं क्या कहूं, बुद्धि काम नहीं करती। इसी कारण से छुट्टी की प्रार्थना कर रहा हूँ।"

मैं बोला–"तुम भरोसे के और शाही मंसबदार हो। यकायक तो मैं तुमको अलग कर नहीं सकता। बादशाह को लिखता हूं। वह जैसी आज्ञा देगा वैसा ही करूँगा।"

"मैंने उसे टाल दिया कि शाम को तुम से मशवरा लूँगा।"

"वह चला गया। थोड़ी देर पश्चात् मेरे अर्दली के सिपाहियों ने भी आकर वही बात की। यह खास मीरता के निवासी थे। मैं अत्यन्त चिन्तित हो गया। चेहरे का रंग फ़ीका पड़ गया। काटो तो बदन में लोहू नहीं। इन्हें समझाया बुझाया राज़ी किया।"

———

✿ इक्कीसवां परिच्छेद ✿

॥ भ्रष्टता की और अधिक व्याख्या ॥

"दो बजे पश्चात् पंडित मुझ से मिलने आया। मुझे आज उससे कई एक प्रश्न करने थे। मैंने नमस्कार किया। उसने जय हो कहकर आशीर्वाद दिया।"

मैंने कहा—"भूतों के सम्बन्ध में आपकी जानकारी बढ़ी चढ़ी है।"

पंडित बोला—"शास्त्रों पर चूँकि मैं बिचार करता रहता हूँ, इसलिये कुछ थोड़ा बहुत इस विषय पर प्रकाश डाल सकता हूँ लेकिन पूरी जानकारी का मुझे दावा नहीं है। मैं इस सृष्टि का जीव हूं, भूत दूसरी दुनियाँ के हैं। लोक परलोक में अन्तर होता है। लोक के आदमी पर लोक की बात कम जानते हैं। इनका ज्ञान सीमित होता है। मेरा भी ज्ञान सीमित है।"

मैंने कहा—"यह आपका बड़प्पन है वर्ना आपकी जानकारी बढ़ी चढ़ी और आदरणीय है। आप जैसा इस विषय में जानकार मैंने तो कम से कम देखा नहीं।"

पंडित बोला—"यह आपकी कृपा है। बात केवल इतनी है। मेरा अनुभव खुला है। मैं पढ़ता हूँ। इस पर बिचारता भी रहता हूँ। बहुत जगह शास्त्र स्पष्ट वर्णन नहीं करते, वहां अपना निज अनुभव सहायक होता है।"

मैंने पूछा—"क्या भूत सदा भूत योनि में रहते हैं या इनका कभी छुटकारा भी होता है?"

पंडित ने उत्तर दिया—"स्थिरता और नित्यता तो केवल ईश्वर में है। यहाँ कोई अवस्था अधिक समय तक नहीं ठहरती। जब भूत अपने कर्म के फल को भोग लेते हैं, फिर उनको दूसरी योनि में आना पड़ता है। यह प्राकृतिक नियम है।"

मैंने कहा—"यह कर्म कैसा?"

पंडित बोला–इस प्रश्न का उत्तर मैं पहिले दे चुका हूँ। दुनियाँ में जो कर्म किये जाते हैं, उनका फल परलोक में मिलता है। कर्म करने से मन के अन्दर विशेष प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं। इनका प्रभाव कुछ समय तक बाक़ी रहता है। मरने के बाद वह फुरा करता है। जब फुर कर समाप्त हो जाता है तब भूतों को प्रेत योनि छोड़नी पड़ती है। इसी प्रभाव के परिणाम का नाम भोग है। दुनियाँ कर्म क्षेत्र है यहाँ कर्म किये जाते हैं और परलोक फल क्षेत्र है वहाँ फल मिलता है।"

मैंने पूछा–"क्या कोई ऐसा उपाय है कि कर्म का फल न मिले।"

पंडित ने उत्तर दिया–"हां है। कोई रोग ऐसा नहीं है जिसकी दवा ईश्वर ने उत्पन्न न की हो। यदि प्राणी ज्ञानी हो जाय और ज्ञान का विचार और अभ्यास किया करे फिर कर्म के बन्धन से उसे मुक्ति मिल जायगी। बिना आज्ञा के मुक्ति नहीं होती।"

मैंने कहा–"यह ज्ञान क्या वस्तु है ?"

पंडित बोला–"अपनी असलियत, अपना स्वरूप और अपने 'हैपने' को जान लेना ज्ञान है। यदि यह ज्ञान किसी को एक बार भी हो जाय तो फिर उसे कर्म के फल भोगने का डर नहीं रहता। मगर यह साधन अटल नहीं है। अत्यन्त कठिन है। ज्ञान का मार्ग तलवार की धार है।"

मैंने पूछा–"जब यह ज्ञान इतना कठिन है तो क्या कोई सुगम सा उपाय नहीं है जिससे कर्म का डर बाक़ी न रहे।"

पंडित ने उत्तर दिया–"हां ऐसा भी है। भक्ति मार्ग का साधन सरल है। इसका भी वही परिणाम होता है। भक्ति करने से ज्ञान सरलता से मिल जाता है।"

मैंने फिर कहा—"भक्ति को तुम सुगम बताते हो, मगर मैं तो इसे कठिन समझता हूँ।"

पंडित ने कहा—"तब यह आपके लिये अवश्य ही कठिन होगी।"

मैंने पूछा—"यह क्यों ?"

पंडित ने उत्तर दिया—"सब बातें मनुष्य के विचार, श्रद्धा विश्वास, साहस और आचरण पर निर्भर हैं। जिस काम को जिसने कठिन समझ लिया, इसके लिए वह कठिन है और जिस काम को जिसने सरल मान लिया उसके लिए सरल है। सब बातें विचार से सम्बन्धित हैं। जो जिस भ्रम में फँसा है उसी के तमाशे देखता रहता है।"

मैंने कहा—"क्या भूत भी भ्रम के कारण ही दिखाई देते हैं ?"

पंडित बोला—"निस्संदेह ! भ्रम के अतिरिक्त यहां कुछ नहीं है। जिसको भूत का बहम है अवश्य भूत योनि में जायगा और शरीर त्यागने पर भूत ही बनेगा। लेकिन जिसको भूत का भ्रम नहीं है, वह भूत की योनि में कब जाने लगा।"

मैं इसकी इस बात को सुन कर हृदय में कांपने लगा, क्योंकि दुनियां में तो भूत मुझे सताते ही हैं, मरने पर ईश्वर जाने क्या क्या विपति न ढायेंगे।"

मैंने फिर मुँह खोला—"क्या ज्ञान और भक्ति के अतिरिक्त और कोई उपाय है जो बहुत सरल हो और भूत उसे न सतावें ?"

पंडित बोला—हां है। जिसको भूत सताया करते हैं वह तांत्रिक ब्राह्मण से अनुष्ठान कराये। दुर्गापाठ सुना करे। यह ब्राह्मण अपने आचरण से, अपने विचार और गहरे ध्यान से इसे शक्ति देगा। यहां भी केवल कल्पना का ही नियम काम

करता है। मगर शर्त यह है कि अनुष्ठान करने वाला भूतों के दूर करने के संकल्प को दृढ़ करता जाय। तब तीर निशाने पर बैठेगा, वैसे नहीं।"

मैंने प्रश्न किया—"यह अनुष्ठान कितने दिनों में पूरा होता है ?"

पंडित ने उत्तर दिया—"इसमें ४० दिन तो कम से कम अवश्य लगते हैं मगर अधिक दिन अथवा महिने लग जाँय तब भी सम्भव है। सब बातें अनुष्ठान करने और कराने वाले के सहमत होने और गहरे ध्यान पर निर्भर हैं।"

"अफ़सोस ! यहां तो मुझे दिन प्रति दिन मरना और नया जन्म धारण करना पड़ रहा है और यह कम से कम ४० दिन का समय नियत कर रहा है। मैं समझ गया कि बुरी तरह मेरा फँसाव होगया। भूत मुझे चैन न लेने देंगे। घोर कष्टों में फँसायेंगे। मरने के बाद मुझे भी भूत ही होना पड़ेगा। अफ़सोस ! मैंने क्यों पथ भ्रष्टता ही से जीवन प्रारम्भ किया। क्यों सहस्रों और लाखों का खून अपनी गर्दन पर लिया और क्यों मेवाड़ के बसे हुये राज्य के विनाश का कारण हुआ। मरने के बाद क्या होगा इसकी ख़बर ईश्वर ही को होगी। मेरा तो जीवन ही में नाक में दम आरहा है।"

उस दिन अवकाश नहीं था। बहुत से काम करने थे। पंडित को दक्षिणा देकर शीघ्र विदा किया।

—❀०❀—

❀ बाईसवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्टता की स्वीकृति (इक़रार) का लेख ॥

"ज्यों त्यों राज काज से अवकाश मिला। अलग क़लम, काग़ज़ दवात लेकर बैठा। राजा टोडरमल को निम्नलिखित पत्र लिखा—

"राजकुमार के मोती अकबर की राजसभा के रत्न, राजा टोडरमल ! आपका यश और कीर्त्ति बढ़े। सेवक हाथ जोड़ कर सविनय प्रार्थना करता है-प्रार्थी राज आज्ञा से चित्तौड़ आया। यथा शक्ति अपना कर्त्तव्य पालन किया। नगर में शान्ति है। चारों ओर भगवान की बड़ी कृपा है।"

"शत्रुओं का कोसों नाम व निशान नहीं है। नगर में उनके रहने का कोई स्थान नहीं। कहीं कोई डर भय नहीं है। यह सब आपकी प्रभुता का कारण है।"

"लेकिन आश्चर्य की यह एक बात है जो डर-भय का कारण हो रही है कि जीवित राजपूत तो दिखाई नहीं देते, मुर्दे सिर पर सवार हैं। जीवित प्राणियों से मुठभेड़ सरल है मगर मुर्दा प्राणियों से लड़ना कठिन और असम्भव है। दिन के समय वे दृष्टि से दूर रहते हैं। रात को कष्ट दायक होते हैं। इन पर किसी प्रकार के शस्त्र का भी असर नहीं होता, आश्चर्य है, भारी घबराहट है। राज्य से वजीफ़ा पाने वाले राजपूत आज प्रातःकाल फ़रार हो गये। इनका हाल सुनकर शेष सिपाही बेचैन हुये। दारोग़ा को चित्तौड़ में ठहरने से इन्कार है। मेरे हृदय को भारी चिन्ता और असमंजस है।"

"मैं इतना परेशान हूँ कि न ज़बान से कह सकता हूँ न लेखनी से लिख सकता हूं। राज्य सेवा करने में कोई त्रुटि नहीं है मगर परिस्थिति और अनुमान कहता है कि भाग्य सहायता नहीं कर रहा। न दिन को चैन है न रात को आराम। जीवन की आशा नहीं है, मृत्यु गला दबा रही है। साहस और उत्साह क्षीण है, निराशा सता रही है। मैं अपने दुःखों की कहानी आप ही लिखता जाता हूँ। यदि जीवित रहा तो भेंट करूँगा, यदि मृत्यु आगई तो आश्चर्य और पश्चाताप के साथ दुनियां से चला जाऊँगा। यह वृतान्त लम्बा चौड़ा है। पश्चाताप से हाथ

मल कर पछताता हूँ। राजपूतों से शर्माता हूं। दुनियावी लालच ने नष्ट भ्रष्ट किया और अपने साथियों में अपमानित और घृणित हुआ।"

"यदि आज रात की व्याधा टल गई, जीवित समझिये वर्ना मृत समझ लीजिये।"

अधम सेवक

....सिंह मीराती

"पत्र लिख कर लिफ़ाफे में बन्द किया और उसे सील मुहर करके सुरक्षित रख दिया ताकि सिवाय राजा टोडरमल के कोई अन्य उसे न खोल सके।"

❀ तेईसवां परिच्छेद ❀

॥ भ्रष्ट जीवन का भ्रष्ट परिणाम ॥

"पंडित की बातों से मैं अपने दुःख को न भुलासका। जी मैं तो आता था कि उसी को अनुष्ठान करने के लिये लगाऊँ मगर उसने ऐसा इलाज बताया था जिसका प्रभाव देर में होता। फिर इससे लाभ भी क्या था! मन में विचार उठा कि भाग कर जान बचा ले जाऊँ। मगर भागकर जाता कहां! जीवित लोगों को धोका देना सरल है। मृतकों से बच कर निकलना असम्भव है। जब वे बन्द घर में प्रवेश करके सताते हैं तो मार्ग में सकुशल छोड़ने वाले थे!"

"जब मैं सायंकाल को शयनागार में आया, देर तक सोचता रहा कि क्या करूँ। जीवन नीरस हो गया था। आत्म-हत्या करने की ठहराई। राजपूतों ने पहिले भी ऐसे काम किये थे। मैंने महाभारत और रामायण का अध्ययन किया था।

पांडवों के बर्फ में गल कर मर जाने और भरत शत्रुहन आदि के गुप्तार घाट में डूब मरने की घटनायें स्मरण थीं

मगर राजस्थान हिमालय तो नहीं था जहां मैं बर्फ के नीचे कर मर जाता। और न यहां कोई ऐसी नदी है जिस में डूबकर अपने प्राण देता। अ त में सोचते सोचते एक युक्ति समझ में आई जो मेरे लिये सरल थी। मन ने राय दी कि इसी से काम लेना चाहिये।"

"प्रथम मैंने अधिक मात्रा में अफीम घोली। उसे पी गया। हीरा यद्यपि मूक पशु है मगर वह मेरी हरकतों का इल्म रखता था। इसने मुझे अपने पंजों से बार बार रोकना चाहा मगर मैंने तलवार खेंच कर उसे डरा दिया। वह डर के कारण पलंग के नीचे छिप रहा।"

रात के बारह बज गये। सब लोग सो गये। आशा थी कि अफीम खाने से मैं अपने आप मर जाऊँगा मगर बेचैनी की दशा में मुझे इसका नशा तक नहीं हुआ, तब मैं घबराया। अर्ध रात्रि के समय भूतों का आना निश्चय था। हृदय पर भय का आक्रमण था। मृत्यु को तो मैं भयङ्कर नहीं समझता था। भूत निस्सन्देह बुरी बला और प्राण घातक थे। मुझे भी कुछ न सूझी। मैं खाट पर पांव लटका कर बैठ गया। पानी से भरी चौड़े मुँह की दो नाँदें नीचे रख लीं। कटार से अपने पांवों की घुड़ नसों को जो टखनों के पास होती हैं निर्दयता से काट दिया और पांवों को नांदों के अन्दर डाल लिया ताकि खून इनमें गिरता रहे और मेरी दृष्टि इस पर न पड़े। यह आत्म हत्या करने का बड़ा सरल ढङ्ग है। इससे तनिक भी कष्ट नहीं होता, और न प्राणों के खिंचाव का दर्द होता है। मैंने बचपन में यह उपाय किसी से सुन रक्खा था।"

"फिर बड़ा मसंद लगाकर खाट पर बैठ गया। रक्त निकल रहा है। मरने की तैयारी है। क़लम हाथ में है ताकि मैं न केवल सरलता से अपने प्राण दे दूँ बल्कि अपना हाल भीलिखता रहूं।

काम में चित्त वृत्ति के लगे रहने से मनुष्य अचिन्त और बे सुध हो जाता है। मैं लिखता रहा। एक घण्टे के पश्चात् दरवाज़ा अपने आप खुल गया।

"और डराने वाले भूतों ने अन्दर प्रवेश किया। आज जैमल, पुत्तू और उच्च पदाधिकारी राजपूत जो युद्ध में मारे गये थे, मेरे सामने आकर खड़े हो गये। चम्पावती, पुत्तू की वीर माता और स्त्री भी मौजूद थीं और वह आदमी भी था जो नित्य प्रति मुझे आकर जगाता और निद्रा भङ्ग करता था।.....वे आते ही क़हक़हा मारकर हँसने लगे, और इतने ज़ोर से हँसे कि इनकी हँसी की आवाज़ चारों ओर गूँज उठी। हीरा धीरे २ दबे गले से घुर्रा उठा। अर्दली के सिपाही भी आवाज़ को सुनकर जाग उठे और द्वार से झांकने लगे; मगर भूतों की शक्ल व सूरत देख कर इतने भयभीत हुये कि पीछे लौटने में उन्होंने अपनी कुशल समझी। इनको अनुभव होगया था कि भूतों को मारना अथवा इनसे मुठभेड़ करना असम्भव है। मैं तो अपने मन में यह समझ रहा था कि थोड़े से आदमियों को छोड़कर दूसरों को भूतों के नित्य प्रति आने का इल्म नहीं है मगर यह विचार ग़लत था। वे सब कुछ जानते थे। हां मुझ से खुलकर बात नहीं करते थे। परस्पर इसी विषय पर बात चीत हुआ करती थी।"

"भूतों ने फिर द्वार बन्द कर लिया ताकि कोई आदमी यदि चाहे तो भी अन्दर न आसके। अर्दली के सिपाहियों ने आज जाकर मुसलमान अफ़सर को भी इस घटना से परिचित किया। कई आदमी मेरे शयनागार के इधर उधर आये भी थे। उनकी आहट मुझे मिल गई थी और बातें भी उनकी सुनाई देती थीं! मगर ऐसा प्रतीत हुआ कि किसी ने कई बार लगातार इन पर बन्दूकें चलाईं। वह भाग निकले और फिर सन्नाटा छागया।"

"भूत मेरे चारों ओर चुपचाप खड़े थे। जब खामोश हो गई, जैमल आगे की ओर बढ़ा। "राजपूत ! यह तूने क्या किया ? क्या मेरी कृतज्ञता इतनी यथेष्ट (काफ़ी) नहीं थी कि तुझे दुष्टता से बचाती।"

"पुत्तू बोला--"तू राजपूत नहीं है। राजपूतों में नमक हरामी कहाँ ! तू आदमियों में कपूत और अत्यन्त पापी है।"

अन्य सरदार मुझसे बोले-' इस भ्रष्ट कार्य से अन्त में तुझे लाभ क्या हुआ ! तूने सबसे श्रेष्ठ हिन्दूपति के विनाश का बीड़ा उठा लिया, क्या तुझे ईश्वर का भी डर नहीं हुआ ? देख ! कितने आदमियों का खून तेरी गर्दन पर है। तू यमराज को क्या उत्तर देगा ! जब चित्रगुप्त तेरा काला आचरण पत्र (अमालनामा) पेश करेंगे तो फिर इनसे क्या कहेगा।'

पुत्तू की मां बोली-'अन्त में तू मर्द है या कौन है। देख ! मैं स्त्री होकर राणा के लिये लड़ी। तू तो स्त्री से गया बीता है। शर्म है इस राजपूतिनी के लिये जिसने तुझे जन्म दिया था।'

पुत्तू की स्त्री ने आंखें दिखाई·····क्रूर हृदय, जल्लाद और निर्दयी हत्यारे ! तेरा हृदय पत्थर से भी अधिक कठोर है। मेरा पति क्या वीर पुरुष और सूरमा है ? इसने वीरों की लाज रखली। तूने राजपूतों का नाम डुबोया।'

चम्पावती आगे बढ़ी-'कमीने ! तूने मुझे स्त्रियों के बीच में अपमानित बना दिया। तू सिंह नहीं स्यार है। कुत्ते से गया बीता है। तू लोमड़ी जैसा मक्कार है। तू इस योग्य है कि तड़पा तड़पा कर मारा जाय और करोड़ों जन्म नर्क में पड़ा रहे। यह सच है कि मैं तेरी विवाहिता नहीं हुई मगर मेरे नाम को बट्टा लग गया। अच्छा ! सँभलजा ! अब दण्ड का समय आरहा है। इसी प्रकार औरों ने भी मुझे बुरा भला कहा।"

मुझे नशा तो हुआ नहीं था। यदि अफ़ीम का नशा होता तो वह इस दशा में हरण हो जाता। यदि भूमि फट जाती तो मैं प्रसन्नता पूर्वक उसमें समाजाता। मगर पृथ्वी माता मुझ जैसे भ्रष्टाचारी को कब अपनी गोद में लेने लगी थी। प्राण नहीं निकलते थे। परन्तु हर प्रकार के दुखों और कष्टों से पीड़ित हो रहा था।

पुत्तू बोला—"इसने आत्म हत्या की है। देखो घुड़नस काटकर नादों में पांव लटका कर बैठा है।" उसकी माँ ने कहा—"ऐसे भ्रष्ट जीवन का ऐसा ही भ्रष्ट परिणाम होता है।" चम्पावती बोली—"मगर यह मरेगा कैसे? इसे तो अभी बड़े २ कष्ट भोगने पड़ेंगे। यदि मर गया तो मृत्यु के पश्चात् इसकी वह दुर्गति की जायगी जैसी कभी किसी की नहीं हुई।"

फिर जैमल हँसा—"मगर यह कुछ लिख रहा है। हाथ में लेखनी है और अपना आचरण पत्र पूरा कर रहा है। यह ईश्वर की महिमा है। इसे यमराज के यहाँ अपना विवरण सुनाते समय किसी साक्षी की भी आवश्यक्ता न होगी। यह आप अपनी साक्षी है। जब कभी उसका लेख राजपूतों के दृष्टि गोचर होगा वे न केवल इसको उठते बैठते धिक्कारते रहेंगे बल्कि वे अपने आपको भी संभाल कर रक्खेंगे और उन में से किसी को भी इसकी दुष्टता की हवा न लगेगी! अच्छा भाई! लिख ले। शीघ्रता कर। तेरा दुनिया से कूच करने का समय आरहा है। और नहीं तो यही सही! तेरा कारनामा नवयुवकों के लिये शिक्षा प्रद सिद्ध होगा।"

"मैंने लिखना प्रारम्भ किया। इनकी बातों तक को बराबर लिख लिया। फिर सब भूत मेरे पलंग के चारों ओर नाचने व गाने लगे।"

नापाक ! नापाक !! नापाक !!!
तू है मूँजी, तू बद बातिन, तू सियाह दिल फ़ासिद ।
बुरी बला है बहुत बुरा है, अक़्ल तेरी है कामिद ॥
नापाक !.....

क़ौम का दुश्मन मुल्क का दुश्मन, राजा प्रजा का दुश्मन ।
बशर का दुश्मन अपना दुश्मन, देवी देवता का दुश्मन ॥
नापाक !.....

ढ़ाया देवल ढ़ाया, मुँह को ख़ाक में मिलवाया ।
जोगी जती यती पंडित को, जाम ज़हर का पिलवाया ॥
नापाक !.....

बाप का दुश्मन, मां का दुश्मन, बीबी अरु बच्चों का दुश्मन ।
इसका दुश्मन, उसका दुश्मन, पक्कों अरु कच्चों का दुश्मन ॥
नापाक !.....

दिल का पापी अक़्ल का पापी, जिस्म व जां का है पापी ।
यह पापी है सबसे बढ़ कर, नामोनिशां का है पापी ॥
नापाक !.....

नर्क पड़ेगा-रंज सहेगा, दुख अजाब होंगे भारी ।
चल चल चल चल पापी तू चल, कर चलने की तैयारी ॥
नापाक !.....

"मैंने इस गाने को लिख लिया जैमल हँसा । 'यह राजपूत नहीं है । यह चान्डाल है देखो ! इसने कहीं क़ाग़ज़ों पर अपना नाम तो नहीं लिखा है ।' पुत्तू ने झुककर देखा, 'अपना नाम हर जगह उड़ाता गया है ।"

जैमल बोला—"अच्छा हुआ, ऐसे भ्रष्ट नाम को राजपूतों की सूची में कभी सम्मिलित नहीं करना चाहिए वर्ना इससे राजपूतों की भारी बदनामी होगी ।"

"चम्पावती अन्त में मेरे सामने खड़ी हुई। 'तेरे पाप क्षमा के योग्य नहीं। मां बाप का हत्यारा, गौ ब्राह्मण का बधिक, साधू सन्त का हत्यारा तो फिर भी क्षमा किया जा सकता है मगर राजा के हत्यारे, क़ौम के हत्यारे और देश के हत्यारे को ईश्वर भी क्षमा प्रदान नहीं करता। टोडरमल को याद कर, वह तेरी मदद करे। अकबर को बुला वह इस समय तेरे काम आवे। मूजी तूने बड़ी भारी नमक हरामी की है।"

"चम्पावती की बातें ज़हर में बुझाई हुई तलवार बनकर मेरे हृदय को चीर रही थीं मगर मैं बेबस था। चुपचाप सुनता रहा।"

"फिर मेरे शरीर में सनसनाहट शुरू हुई। हाथ कांपने लगा। देह की यह दशा थी कि मानों सहस्रों सांप और लाखों बिच्छू डङ्क मार रहे थे। नस २ और नाड़ी २ दर्द करने लगे। मैं कराहता जाता था। भूत क़ह क़हा मार कर हँसते थे। शरीर में आगलगी हुई थी। अन्त में बेहोशी होने लगी। क़लम हाथ से गिर गया....." ❀ इति ❀

लेखक का नोट

यह भ्रष्ट (नापाक) जीवन की भ्रष्ट नापाक कहानी है। इस का लेख किस के हाथ लगा और राजस्थान के चारणें (भाटों) को इसका कैसे पता लगा, यह हमको ज्ञात नहीं हुआ। हां, कहावतों में इसका वृतान्त इसी प्रकार चला आता है। कहने वालों ने भी ऐसा वर्णन किया है। इसके पश्चात् क्या हुआ या तो ईश्वर जानता होगा या वह जिस पर बीती होगी।

* वन्दना *

❀ छन्द ❀

प्राण दाता, दान दाता, नाम दीजे दान।
भक्ति दीजे पतित पावन, नष्ट हो मद मान॥
कष्ट दारुण दूर कीजे, मेट कर अज्ञान।
चरण शरण की ओट पकड़ी, बख्शिये निज ज्ञान॥
आया शरणागत तुम्हारे, राख लीजे लाज।
राधास्वामी की दया से, मेरा हो न अकाज॥

The
End